Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

8971

ओ३म्

अथर्व वेद भाष्य

चतुर्दश काण्ड

DONATION

'दाम्पत्य सूत्र'

R
5.1
m-A
ASG

भाष्यकार

स्व० स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२१५
२६

८६७१

Acc. No. ८६७१

Class No. २१५/२६ Book No. ______

Author स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती

Title अथर्व वेद भाष्य

Due on	Borrower's Name	Returned on

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
कृपया पुस्तक के ऊपर कोई निशान आदि न लगायें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

215/29

पुस्तकालय

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

वर्ग संख्या 215/29 आगत संख्या 8971

पुस्तक-विवरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित ३०वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापिस आ जानी चाहिए। अन्यथा ५० पैसे प्रति दिन के हिसाब से विलम्ब-दण्ड लगेगा।

मेरठ शहर।

R215.1,SAM-A

8971

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२१५
२६

८६७१

Acc. No. ८६७१

Class No. २१५/२६ Book No. ______

Author स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती

Title अथर्व वेद भाष्य

Due on	Borrower's Name	Returned on

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
कृपया पुस्तक के ऊपर कोई निशान आदि न लगायें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाशक :—

वर्णाश्रम संघ प्रभात आश्रम

भोला झाल (मेरठ)

आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति
भूतपूर्व कुलपति, गुरुकुल काँगड़ी
विश्वविद्यालय द्वारा प्रदत्त
संग्रह 8971

लेखक :—

भाष्यकार स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती

पुस्तकालय
पुस्तकालय
गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय

मूल्य :—५८ पैसे

मुद्रक :—

अजय प्रिन्टिङ्ग वर्क्स, ३२४/३ स्वर्ग विलास

सराय खैर नगर, समीप जीमखाना मैदान

मेरठ शहर ।

R215.1,SAM-A
8971

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ॐ वर्णाश्रम ग्रन्थ माला का तृतीय पुष्प

प्रकाशक द्वारा सर्वाधिकार सुरक्षित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

भूमिका

मनुष्य अन्य प्राणियों में जिस कारण से श्रेष्ठ माना जाता है वह ज्ञान ही है, यदि यह भी इतर जीवों की भांति ज्ञान के स्तर में समान रहे तो इसकी श्रेष्ठता ही नष्ट न हो जाये अपितु यह निम्न श्रेणी के प्राणियों में माना जाने लगेगा। अतः ज्ञान की महत्ता सूर्य प्रकाश की भांति स्पष्ट है और इससे सुतरां यह भी अभिव्यक्त होता है कि यदि मानवता की अर्थात् मनुष्यपन की रक्षा करनी है तो ज्ञान की रक्षा सर्वथा और सर्वदा अनुपेक्षणीय है। वेद, प्रभु प्रदत्त ज्ञान का अक्षय कोष है जिसके बल पर ही मानव ने अपना विकास किया इसके ही पूर्ण प्रकाश में अपने जीवन के प्रत्येक आवश्यक मार्ग का दिग्दर्शन प्राप्त किया। प्रकाश को ठीक रूप से प्रकाश समझकर उसका समुचित प्रयोग ही प्रकाश्यमान वस्तु को प्रकाशित कर प्रयोग कर्त्ता के अभीप्सित अभीष्ट को सिद्ध करने में समर्थ होता है इसके विपरीत लाभ के स्थान पर हानि ही उठानी पड़ती है।

यही बात वेदरूपी प्रकाश के सम्बन्ध में भी समझनी चाहिये। वेद के अन्दर जीवन के प्रत्येक पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है आवश्यकता है तो केवल उसको समझने को। गृहस्थ जीवन मानव समाज की आधार शिला है वह आधार शिला सुदृढ़ कैसे रहे उसका सर्वाङ्गीण विकास कैसे हो, बस यही उपदेश अथर्ववेद के चौदहवें काण्ड में दिया गया। वैसे तो अनेक भाष्यकारों ने इस पर अपनी लेखनी उठाई किन्तु दुरूह स्थलों का स्पर्श किये बिना ही छोड़ दिया पूज्य गुरुवर स्वामी समर्पणानन्द जी महाराज ने इस भाष्य में उन्हीं स्थलों को खोलने के लिये विशेष ध्यान दिया है जिनका परिचय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाठकगण ग्रन्थ में स्वयं करेंगे। स्थाली पुलाक न्याय से (सोमस्य जाया प्रथमं) तथा (मद्यासु हन्यते गावः) मन्त्र का परिशीलन करें। दूसरे सूक्त के ४वें मन्त्र के आगे का भाष्य गुरुदेव का नहीं मिलता अतः उनकी ही शैली का अनुसरण करते हुए मैंने इस काण्ड को पूरा किया। मुझे इस कार्य में कहां तक सफलता मिली है इसका परीक्षण तो विद्वद् वृन्द ही करेंगे।

इस पुस्तक के प्रकाशन का सम्पूर्ण व्यय लाला जयन्ती प्रसाद जी ने दिया जो सर्वथा उनके योग्य ही है। लाला जयन्ती प्रसाद जी एक सच्चे धर्मनिष्ठ आर्य हैं अर्थ शुचिता की दृष्टि से आप पवित्र एवं नित्य अग्निहोत्र सन्ध्या गायत्री जप परायण हैं। दान देने में आपको आनन्द आता है। प्रभात आश्रम से आपका बहुत गहरा स्नेह है। ऐसे उदार दानी की दानशीलता की प्रभु सदा सहायता करते हैं वह इन्हें भी समर्थशील बनाये रखें। इन्हीं की इच्छा के अनुसार पुस्तक के प्रकाशन के लागत मूल्य का आधा मूल्य ही रखा गया जिससे अधिकाधिक इसका प्रसार एवं प्रचार हो सके।

दम्पति अर्थात् पति पत्नी के जीवन सम्बन्धी समस्त उपदेशों का सारभूत होने के कारण इस काण्ड का उपनाम मैंने "दाम्पत्य सूत्र" रखा है जो अर्थानुसार ही है। ओ३म् शमिति।

विदुषां वशं वदः
शंकरानन्द परमहंस
पूर्व विवेकानन्द सरस्वती
प्रधान वर्णाश्रम संघ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथर्ववेद चतुर्दश काण्ड

मन्त्र

सत्येनोत्तभिता भूमिः सूर्येणोत्तभिता द्यौः।
ऋतेनादित्यास्तिष्ठन्ति दिवि सोमो अधि श्रितः ॥१॥

शब्दार्थ—भूमिः, पृथिवी, सत्येनोत्तभित्ता, सत्य के सहारे खड़ी है, उठी है, द्यौः=आकाशस्थ पिण्डों को, सूर्येण—सूर्य ने उत्तभित्ता, उठा रखा है। आदित्याः, आदित्यगण, ऋतेन, ऋतु के सहारे, तिष्ठन्ति, खड़े हैं, सोमः, सोम दिवि प्रकाश में, अधिश्रितः, आश्रित हैं।

इस काण्ड में सूर्या के विवाह का वर्णन है। सूर्या नाम मनुष्य की कार्य शक्ति का है और ज्योतिष शास्त्र में सूर्या नाम सूर्य की प्रभा का है। जिस प्रकार आकाश में सूर्य की प्रभा पृथवी पर पड़ कर सौर मास का निर्माण करती है तथा चन्द्रमा में पड़ कर चन्द्रमास का निर्माण करती है उसी प्रकार मनुष्य के शरीर में (चाहे वह स्त्री हो अथवा वह पुरुष हो) कार्य शक्ति दो प्रकार का चक्र चलाती है। एक मस्तिष्क में प्रवेश करके ज्ञान का चक्र दूसरा सन्तान चक्र। सूर्य की बहुत सी शक्ति सूर्य में ही लौट जाती है। इसी प्रकार योगाभ्यास द्वारा मनुष्य भी अपनी शक्ति को ब्रह्मध्यान में लगाते हैं। यह शक्ति के व्यय का तीसरा मार्ग है। इन तीनों मार्गों की ओर १६वें मन्त्र में निर्देश किया है। मनुष्य की जो शक्ति ज्ञानमार्ग में जाती है उसे सूर्या नाम दिया गया है और जो सन्तान मार्ग में जाती है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसे सोम का नाम दिया गया है। स्त्री और पुरुष दोनों में युवावस्था आने पर शक्ति सोमलोक की ओर जाने लगती है अर्थात् स्त्री और पुरुष दोनों में सन्तान की कामना उत्पन्न होने लगती है। सोम मनुष्य का मस्तिष्क इस सूर्या के पिता का घर है तथा जननेन्द्रिय उसके पति को प्राप्त करती है। युवावस्था में पूर्ण यौवन प्राप्त होने पर जब शक्ति मस्तिष्क से जननेन्द्रिय की ओर प्रयाण करती है:— उसको यहां अलंकार से सूर्या के विवाह के नाम से कहा गया है। इस प्रकार विवाह उन्हीं वर कन्या का उचित है जिनके पहले अपने शरीर में सोम और सूर्या का विवाह हो चुका हो। इसी प्रसंग को सृष्टि में दिखाने के लिये द्यावा-पृथ्वी से इस काण्ड का प्रारम्भ होता है अर्थात् मानो भगवान यों कहते हैं कि हम इस काण्ड में विवाह का वर्णन करेंगे। इस ब्रह्माण्ड में द्यौ और पृथ्वी का विवाह हुआ है—जिससे सोम उत्पन्न हुआ है। अब उस सोम और सूर्या के विवाह का वर्णन आगे होगा। सोम को अपने माता पिता द्यावापृथिवी से क्या सीखना है—सबसे पहले इसी का वर्णन करते हैं।

(यदन्तरा पितरं मातरञ्च)—सबसे पहली बात जो सोम को अपनी माता से सीखनी है—वह सत्यपरायणता (faithfulness) है। इसीलिये कहा है 'सत्येनोत्तभिता भूमिः' परन्तु भूमि माता सत्यपरायण क्यों है क्योंकि सोम का पिता द्यौ दिव्य गुणों से देदीप्यमान है। यहां द्यौ के लिङ्ग को देखकर चौंकना नहीं चाहिये, यह इसी प्रकार से पुरुषवाचक होकर स्त्रीलिंग है जैसे संस्कृत में 'दारा' स्त्रीवाचक होकर पुल्लिग है। अब प्रश्न यह है कि जिन आदित्यों के बल पर द्यौ देदीप्यमान है और जिनमें द्यौ मुख्य है वे किसके बल पर खड़े हैं? उत्तर है—'ऋतेनादित्यास्तिष्ठन्ति' अर्थात् आदित्य नपी हुई गति के सहारे खड़े हैं और उनके इन दिव्य गुणों के कारण सोम खड़ा है। सोम को सोम इसलिये कहा है क्योंकि वह माता पिता दोनों का सार है ॥१॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्र

सोमेनादित्या बलिनः सोमेन पृथिवी मही ।

अथो नक्षत्राणामेषामुपस्थे सोम आहितः ॥२॥

शब्दार्थः— सोमेन=स्नातकेन, आदित्याः=अध्यापन कराने वाले आचार्य बलिनः=कीर्ति वाले, सोमेन=अन्नादि औषधियों के कारण ही, यह (पृथिवी) भूमि, मही, सत्करणीया पूज्या है। अथ=इसीलिये तो सौर चक्र में भी इन नक्षत्रों के उपस्थे=गोद में, सोमः, चन्द्रमा, आहितः, स्थापित किया हुआ है ॥२॥

अब सोम की महिमा गाते हैं क्योंकि विवाह में दूल्हे की महिमा गाई ही जाती है। सोम की महिमा कीर्तन करती हुई भगवती वेदवाणी कहती है कि देखो तो सही—इस सारे ब्रह्माण्ड में सोम का ही राज्य है। संसार आदित्यों की महिमा गाता है तो इसलिये कि उसे आदित्य से ताप और प्रकाश के रूप में सोम की प्राप्ति होती है। लोग आदित्य को क्या जानें यदि उन्हें आदित्य का सारभूत सोम प्राप्त न हो। यह धरती भी सोम के कारण बनी है। इसके वनों में परम औषध सोम निवास करता है और तपोवनों में सब सोमों का परम सोम अर्थात् सारों का सार स्नातक निवास करता है। इसीलिये तो सौर चक्र के भौतिक देवताओं में भी औषधिराज सोम के समान शुक्ल और कृष्ण पक्ष में क्रमशः उपचय और अपचय को प्राप्त होने वाला यह चन्द्रमा रूप सोम का बूटा नक्षत्रों की गोद में स्थापित किया जाता है जिसको आलंकारिक रूप में १५ दिन में पीकर देवता बलवान होते हैं और फिर जब बढ़ने के लिये छोड़ देते हैं तो सोम फिर १५ दिन में पूर्ण कला युक्त हो जाता है ॥२॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्र

सोमं मन्यते पपिवान् यत् संपिषन्त्योषधिम् ।
सोमं यं ब्रह्माणो विदुर्न तस्याश्नाति पार्थिवः ॥३॥

शब्दार्थः—(पपिवान्) पीने वाला, सोमम्=सोम को (मन्यते) समझ लेता है, यत् जिसको लोग, (औषधिम्) औषधि रूप में (संपिषन्ति) पीसते हैं किन्तु (यम्) जिस (सोमं) वीर्य को (ब्रह्माणः) तत्वज्ञ ब्राह्मण ही (विदुः) जानते हैं, तस्य, उसके महत्व को पार्थिव= साधारण शिश्नोदर परायण मूढ़ लोग (न) नहीं, अश्नाति, खाता भोग को जानते हैं ॥३॥

परन्तु जिस सोम का आज हम वर्णन इस सूर्या — विवाह में करने लगे हैं, वह न तो सोम है जिसका रस घोट कर ग्रह मण्डलरूप देवता पीते हैं और न वही सोम है जिसका रस पीकर काया कल्प किया जाता है। जो कोई सोमरस को घोटते हैं और पी जाते हैं और पीकर यह समझ बैठते हैं कि हमने सोम रस पी लिया है—वे प्राकृत लोग इस सूक्त के मर्म को नहीं जान सकते। इस सूक्त में तो हम उस पवित्र सप्तम धातु रूप सोम का वर्णन करेंगे जो ब्राह्मणों की विचाराग्नि का ईंधन बनकर उन्हें ब्रह्मचारी बनाता है और सत्पात्र में दान दिये जाने पर उनकी उत्कृष्टतर प्रतिभा उत्पन्न करके अजरामर पुण्य का भागी बनाता है। इस सोम के तत्व को विद्वान् ब्राह्मण ही जानते हैं। प्रकृति पूजा से कभी भी ऊपर न उठने वाले शिश्नोदर परायण मूढ़जन इसका मर्म क्या जानें ॥३॥

मन्त्र

यत् त्वा सोम प्र पिबन्ति तत आ प्यायसे पुनः ।
वायुः सोमस्य रक्षिता समानां मास आकृतिः ॥४॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आच्छद्विधानैर्गुपितो बार्हतैः सोम रक्षितः ।
ग्राव्णामिच्छृण्वन् तिष्ठसि न ते अश्नाति पार्थिवः ।।५।।

अर्थ—हे (सोम) सोम ! (यत्) जब (त्वा) तुझे (प्रपिवन्ति) लोग भली भांति पी लेते हैं, ततः उसके पश्चात् त (पुनः) फिर (आप्यापसे) बढ़ते हो। (वायुः) रुधिर ही (सोमस्य) वीर्य की (रक्षिता) रक्षक है, (क्षीण वीर्य की कमी पुनः रक्त से पूर्ण होती है) (समानां) संवत्सर का जैसे (मासः) महीना, (आकृतिः) बनाने वाला होता। उसी प्रकार रक्त (सोम) वीर्य का बनाने वाला होता है ।।४।।

हे (सोम) (स्नातक) आच्छद् विधानैः विविध नियमों एवं राज्य कानून से (गुपितः) सुरक्षित तथा (बार्हतैः) शक्तिशाली राजपुरुषों से (रक्षितः) रक्षा किया गया है। (ग्राव्णाम्) उपदेशकों की अर्चना को (शृण्वन् सुनते हुए ही (तिष्ठसि) गृहस्थ आश्रम में स्थित होता है (पार्थिवः) साधारण मनुष्य, (ते) तुम्हारी इस प्रार्थना का (न अश्नाति) भोग नहीं करता इसका भागी नहीं होता ।।५।।

हे सोम जिस प्रकार देवों द्वारा दिये जाने पर कृष्णपक्ष में नक्षत्रमण्डल का सोम फिर नया हो जाता है, जिस प्रकार क्रमशः पत्रों का ह्रास होने पर शुक्लपक्ष में सोम वल्ली के पत्ते फिर नये हो जाते हैं, इसी प्रकार इस परम कारुणिक भगवान् की कृपा से दूध में मक्खन के समान सदा रुधिर में निवास करने वाला सोम प्रयोग में आने पर फिर वहीं से नया हो जाता है परन्तु इस क्रिया में उसको एक मास लगता है। अतः शरीर का सोम, नक्षत्रमण्डल का सोम और वन का सोम तीनों इस अंश में सम अर्थात् समान हैं और उनकी आकृति एक महीने में अपने पूरे रूप पर आ जाती है। जिस प्रकार वन में सोम की रक्षा के लिये विधाता ने पर्वतादि अनेक स्वाभाविक बाड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगाई हैं और जिस पर सोम की खेती करने वाले को अनेक प्रकार के उपद्रवों से बचाने के लिये सोम की रक्षार्थ अनेक प्रकार के आच्छादन बनाने पड़ते हैं इसी प्रकार वीर्यरूपी सोम की रक्षा के लिये कठोर जीवन, सरल वेष और ग्रामवास परिहार आदि अनेक विधान बनाने पड़ते हैं और तब इसका गोपन होता है। इसीलिये इस सोम के पौधे ब्रह्मचारी को आचार्य अपने गर्भ में धारण करता है "आचार्यो उपनयमानः कृणुते गर्भमन्तः"। यह आच्छद्विधान की पराकाष्ठा है। जिस प्रकार उत्तम वायु का आहार करके सोम वल्लो परिपुष्ट होती है, इसी प्रकार व्यायाम और प्राणायाम द्वारा वायु के ठीक संचार से तथा मानसिक शक्तियों की एक शिव-संकल्प में निरन्तर गति होने से मानसिक रूप से वीर्य की रक्षा होती है। अतः कहा है। 'वायुः...... ।' केवल एक आचार्य को नहीं, अपितु शरीर रक्षा के लिये एक, प्राणायामादि की रक्षा के लिये दूसरा और भोजन आदि के प्रबन्ध के लिये तीसरा, इस प्रकार अनेक बड़े लोग मिलकर इसकी रक्षा करते हैं। इसी लिये कहा है—"बार्हतैः सोम रक्षितः"। जिस प्रकार सोम का रस निकालने के लिये ग्रावा अर्थात् पत्थरों का प्रयोग किया जाता है और वह भी मन्त्र पूर्वक किया जाता है। इसी प्रकार सुरक्षित सोम को ग्रहण करने के लिये भी बड़े उत्तम मन्त्रपूत ग्रावा अर्थात् स्तुतिकर्त्ताओं की अपेक्षा होती है। तात्पर्य यह कि तपोवन का सारभूत सोम अर्थात् सच्चा स्नातक तभी विवाह में प्रवृत्त होता है जब तत्वज्ञानी सच्चे निष्कपट गुण ग्राही विद्वान् लोग उसकी स्तुति करते हैं और उसे पूर्ण विश्वास हो जाता है कि उसका यह अनेकविध प्रयत्नों से संचित वीर्य सत्पात्र में दान किया जायेगा। अपने वीर्य की महिमा जानने वाले उसे कूड़े के ढेर पर फैंकने के लिये तैयार नहीं होते और अपने वीर्य के विषय में सच्चा आत्मसम्मान रखने वाले जितेन्द्रिय मनुष्य की ही ऐसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निष्कपट मंत्र-पूत स्तुति सुनने का सौभाग्य उन्हीं को होता है। इस लिये कहा है—'ग्राव्णामिच्छ् एवन् तिष्ठसि' (स्तोत्रमिति शेषः)। ऐसे स्नातकों की संगति में बैठने का सौभाग्य उच्च भावनाओं में कभी न उड़ने वाले, धरती से कभी ऊपर न उठने वाले मनुष्य को प्राप्त नहीं होता।

यहां सोम शब्द की व्युत्पत्ति के विषय में कहना कुछ अप्रासङ्गिक नहीं होगा। सोम शब्द 'षुञ् अभिषवे' इस धातु से बना है। इस धातु का अर्थ है अभिषव करना अर्थात् सार निकालना। परन्तु सार निकालना यह भाव वैदिक भाषा में अति व्यापक रूप में लिया जाता है। बढ़ई लकड़ी में से ऊखल आदि का सवन करता है। सुनार सुवर्ण में से नाना विधि आभूषणों का सवन करता है। लुहार लोहे में से नाना विध शस्त्रास्त्रों का सवन करता है। इस प्रकार किसी भी उपयोगी श्रम का नाम वैदिक भाषा में सवन करना है। इसलिये कहा है 'इन्द्र इत् सुन्वतः सखा' अर्थात् भगवान को श्रम करने वाले प्यारे हैं। इस सवन के परिणाम का नाम सोम है। जैसे जामुन के पेड़ को जामुन और आम के वृक्ष को आम कह देते हैं। इस प्रकार उत्पन्न हुए सोमों की धारा पण्यशाला की ओर बहती है। इस सोम परम्परा में उत्तम सोम सन्तान ही है। इसलिये संस्कृत भाषा में पुत्र को सुत कहते हैं, फिर उस सुत का भी गुरुकुल में सवन होने से सर्व श्रेष्ठ सोम स्नातक का जन्म होता है। इसलिये कहा है—"सोमोऽस्माक ब्राह्मणानां राजा"। जो सूर्या विवाह का प्रकरण यहां छिड़ा है, उसमें शरीर के सारों के सार सप्तम धातु वीर्य को सोम कहा है, जिसका प्रमाण "रैतो वै सोमः" इस प्रकार से शतपथ ब्राह्मण में स्पष्ट रूप से मिलता है। ४–५।

मन्त्र

चित्तिरा उपबर्हणं चक्षुरा अभ्यञ्जनम् ।
द्यौर्भूमिः कोश आसीद् यदयात् सूर्या पतिम् ॥६॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शब्दार्थ-(चित्तिः) यथार्थ ज्ञान (उपबर्हणं), सिर को टेकने के लिये तकिया के समान, (आ) होता है, (चक्षुः नेत्र ही, (अभ्यञ्जनम्) सुगन्धित अगरादि के समान था, (यत्), जब, सूर्या, पति पत्नी की प्राण शक्ति, (पतिम्) सन्तानोत्पत्तिः की ओर (अपात्) जाती है, (द्यौर्भूमिः) द्यावा पृथिवी (कोशः) खजाना (आसीत्), थे।

स्त्री अथवा पुरुष के मस्तिष्क से सूर्या अर्थात् प्राण शक्ति मनुष्य सृष्टि रूप पवित्रतम कार्य के लिये शुक्रकोश की ओर प्रयाण करती है, उसी का यहां पितृलोक से पतिलोक की ओर जाने का वर्णन है। सूर्या जब पितृलोक से अर्थात् मस्तिष्क से सोम लोक की ओर प्रयाण करने लगी, उस समय चित्तिः अर्थात् जागरूकता पूर्वक एक दूसरे के गुणों का यथार्थ ज्ञान (Intelligent appreciation) सूर्या का पौष्टिक भोजन था और सूर्या की आंखें उसका अभिव्यञ्जन कर रही थीं अथवा सूर्या का सोम साक्षात्कार उस दहेज में पुष्टिकारक भोजन के साथ व्यञ्जन मात्र का काम कर रहा था। ये शब्द बड़े मार्मिक हैं। गृहस्थाश्रम की पवित्रता का मौलिक आधार इसमें सुनिहित है। इस समय दो प्रकार का गृहस्थाश्रम प्रचलित है। एक तो हिन्दू विवाह, जिसका आधार अनपढ़ पुरोहित, स्वार्थी और धूर्त ज्योतिषी तथा मूर्ख माता पिता की सम्मिलित भूलों के तेल में स्त्री-पुरुष का आचार डलता है, जिसे गृहस्थ मर्तवान कहें तो उचित होगा। दूसरा विवाह योरोपियन पद्धति का है, जिसका आधार माता पिता का प्रमाद नहीं, युवक युवतियों का उन्माद है। योरोपियन पद्धति का असली मन्दिर नृत्यशाला है जिसमें सायंकाल के समय यौवन के उन्माद रूपी करेले पर शराब का नीम चढ़ाकर युवक युवती जब इस बात का पूरा इन्तजाम कर लेते हैं कि वह युगल बुद्धि पूर्वक कुछ भी न सोच सकें तब गृहस्थाश्रम जैसे पवित्र आश्रम की बुनियाद पड़ती है, जिसका स्वाभाविक परिणाम यह है कि कम से कम पचास प्रतिशतक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवाह विच्छेद में पर्यवसित होते हैं। यह तो आश्रम नहीं हुआ, तम्बू हुआ। जब चाहा उखाड़ कर जहां चाहा लगा लिया। इसमें विश्राम कहां ? हां, कभी कभी घुणाक्षर न्याय से अच्छे जोड़े भी इकट्ठे हो जाते हैं। इस विवाह का पौष्टिक भोजन 'द्यूतं' कहना चाहिये। परन्तु वैदिक विवाह न तो माता पिता द्वारा की गई अन्धी प्रतिज्ञा पर आश्रित है और नाहीं उन्मत्त युवक युवती के अस्थिर अनुरागाभास पर। वैदिक विवाह में चक्षु से पहले चित्ति है, पर योरोपियन विवाह में चित्ति से पहले चक्षु है। वैदिक विवाह का आधार पुरुष में व्रत और पत्नी में व्रत की आराधना है। इस प्रकार व्रत की आराधना 'Unity of missions' आधार है। इस बात को महा कवि कालिदास ने अपने उत्कृष्ट काव्य कुमार संभव में इन शब्दों में दर्शाया है—

धर्मेणाय पदं शरवे कार्यंते पार्वतीं प्रति।
पूर्वापराधभीतस्य कामस्योच्छ्वसितं मनः॥

इसी बात को भगवद्गीता में 'प्रजनश्चास्मि कन्दर्पः' इन शब्दों में दिखाया है। ध्यान रखना चाहिये कि 'जनश्चास्मि कन्दर्पः' ऐसा नहीं कहा। यह प्रकृष्ट अर्थ का पर्यायवाची 'प्र' इस गीता महा वाक्य की जान है। यह जनन में प्रकर्ष चित्ति द्वारा उत्पन्न होता है। सीधे शब्दों में वैदिक विवाह में कोई पति, पति है इस लिये स्त्री का देवता नहीं किन्तु देवता है इसलिये पति बनता है और पत्नी भी देवी है, इसलिये पूजा का स्थान बनती है। परन्तु वे दिव्य गुण चक्षु के द्वारा नहीं देखे जाते। कुमार संभव में कविवर कालिदास ने—

अद्य प्रभृत्यनवमाङ्गि तवास्मि दासः।
क्रीतस्तपोभिः ....॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन शब्दों में इस वैदिक तत्व को प्रतिध्वनित किया है। यहां ध्यान रखना चाहिये कि महादेव जी पार्वती के दास है पर तपः क्रीत दास हैं, रूपक्रीत दास नहीं। पार्वती के उस दिव्य रूप ने कुसुमायुध जैसे योद्धा तथा वसन्त जैसे सहायक की सहायता पाकर भी जहां प्रवेश-द्वार नहीं पाया, उल्टा बिचारे काम को भस्म होना पड़ा, वहां पार्वती के दिव्य तप ने अविचल आसन जमा लिया।

दूसरी ओर —

वपुर्विरूपाक्षमलक्षजन्मना, दिगम्बरत्वेन निवेदितं वसुः।
वरेषु यद्बालमृगाक्षि मृग्यतं तदस्ति किं व्यस्तमपि त्रिलोचने ॥

इस प्रकार जिनका उपहास किया गया। उनके लिये पार्वती जी ने इतना कठोर तप किस लिये किया ? इसका उत्तर कालिदास ने इन शब्दों में दिया है —

उपात्तवर्णे चरिते पिनाकिनः,
सबाष्पकण्ठस्स्खलितैं पदैरियम्।
अनेकशः किन्नरराजकन्यका,
वनात्त संगीत सखीर रोदयत् ॥

इससे स्पष्ट है कि सच्चे प्रेम का आधार चरित्र की अभिवन्दना से होता है. इसी को यहां चित्ति के नाम से कहा गया है और इसी का वर्णन आगे चल कर 'श्रोत्रे ते चक्रे आस्तां' इस तरह ११ वें मंत्र में कहेंगे। कन्या को जहां बहुत सा यौतुक दिया जाता है, उसमें कुछ नकदी भी दी जाती है। सूर्या के विवाह में फिर भला किस बात की कमी रहती। साक्षात सविता यौतुक देने वाले फिर भला कसर क्यों रखते। वसन्त के अलबेले श्रृंगार से सजी द्यौ और भूमि दोनों यौतुक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में दे। डालेकदाचित् उसी दिन से आज तक दिगम्बर होकर छिपे हुए हैं। अब तक लज्जा के मारे बाहर नहीं आते। सीधे शब्दों में पूर्ण यौवन प्राप्त होने पर जब सच्चा शृंगार - रस किसी युवा के शरीर में प्रादुर्भूत होता है तो वह फिर अपनी आनन्दवृद्धि के लिये बाह्य साधनों की खोज नहीं करता। उल्टा सम्पूर्ण आकाश और पृथ्वी को अपने आनन्द के रंग में रंग देता है और यदि कहीं वसन्त जैसी ऋतु ने संसार भर में आनन्द की रागिनी छेड़ी हो तो सोने में सुगन्ध है, तब तो उसके आनन्द का ठिकाना नहीं। इसी को यहां इन शब्दों में कहा है —

द्यौर्भूमिः कोश आसीत् ॥६॥

मन्त्र

रैभ्यासीदनुदेयी नाराशंसी न्योचनी।

सूर्याया भद्रमिद्वासो गाथयैति परिष्कृता ॥७॥

शब्दार्थः- अनुदेयी = परिचारिका, रैभी, अनुरागभाजन की प्रशंसा (नाराशंसी कुलवृद्धों की विरुदावली, न्योचनी) आभूषण,-सूर्यायाः) सूर्य के वासः, वस्त्र, गाथया, सुन्दर गुण गानों से परिष्कृता = सुशोभित, रति होते जा रहे हैं ॥७॥

सूर्या की इस मंगल यात्रा में रेभी (अनुदेयी Excort जो दिल बहलाव के लिये उसके साथ जाती है और नाराशंसी (न्योचनी) परिचारिका थी। अब प्रश्न उठता है कि यह रेभी, अनुदेयी और न्योचनी कौन हैं। पहले २ जब लड़की पति के घर जाती है तब वह दुःख और लज्जा के कारण कुछ करती धरती नहीं, यहां तक कि उसे पैर हिलाना भी कठिन हो जाता है। अतः उसके साथ एक परिचारिका जाती है जो कि उसका मनोरंजन करती है, यही अनुदेयी है। रेभी को समझने के लिये पहले रेभ को समझना होगा। रेभ का अर्थ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चारण है अर्थात स्तुति द्वारा लोगों की उच्च भावनाओं को भड़काने वाला। रेभ को पुत्री रेभी हुई। इस प्रकार रेभी का भाव यह हुआ कि किसी युवा अथवा युवती के गुरुजनों अथवा अभिनन्दकों द्वारा की कई उसके अनुराग भाजन की प्रशंसा रेभी है। यह प्रशंसा उसकी अपने द्वारा कमाई हुई होती है। पर नाराशंसी उसके कुलवृद्धों की विरुदावली है। कुल की प्रशंसा उसकी परिचारिका है। नरशंस से उत्पन्न होने वाली नारोशंसी है। सूर्या के वस्त्र बड़े सुन्दर हैं। चारों ओर उस नवयुवक और नवयुवती की जवानी की चर्चा है। उसका अंग अंग गात्र अर्थात् गाता है। स्वास्थ्य का भी कुछ कहना नहीं। मूर्तिकार की कला उसे रूपक (model) के रूप में हथियाना चाहती है। बस इस संगीतमयी कीर्तिगाथा के सुन्दर वेष-भूषा से सजी हुई मंगल वेष धारण किये हुए सूर्या पतिलोक को जा रही है। इस गाथा का एक उदाहरण कवि कुल गुरु कालिदास के इन शब्दों में देखने को मिलता है —

युवा युगव्यायत बाहुरसलः कपाट वक्षः परिणद्ध कन्धरः।
वपुः प्रकर्षादजयद्गुरुं रघुस्तथापि नीचैर्विनियाददृश्यत ॥

इसके विपरीत आज कल का भी वर्णन किसी कवि ने अच्छा चित्रण किया है।

पहले जवानों के लबों पर कारनामें लिखती थी।
अब तो मूंछे रह गईं मुंह काला करने के लिये ॥

वेद भी सूर्या का बहुत उपयुक्त वर्णन कर रहा कि अहा! सूर्या का वस्त्र कैसा सुन्दर है क्योंकि वह गाथा से परिष्कृत होकर आ रही है।७॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्र

स्तोमा आसन् प्रतिधयः कुरीरं छन्द ओपशः ।
सूर्याया अश्विना वराग्निरासीत पुरोगवः ॥८॥

अर्थ—(सूर्यायाः) कन्या के स्वछन्द शृंगार ही (स्तोमा) कीर्तन करने वाले गुणगान करने वालों के (प्रतिधयः) प्रतिनिधि (आसन्) थे। अश्विना, दोनों पक्ष के कुल पुरोहित ही (वरः) एक दूसरे को चुनने वाले (आसीत) थे। अग्निः संकल्पाग्नि ही (पुरोगवः) वर वधू का अग्रगामी मार्ग द्रष्टा था ॥८॥

जब सूर्या पितृलोक से पतिलोक को अर्थात् मस्तिष्क से प्रजन लोक को चली तो चारों ओर के अंग स्तुतिगान सहचारी वाद्य बने और सहचर वर के वरण में स्वच्छन्दता केश का शृंगार अर्थात् मुकुट बनी और ज्ञान तन्तु (Pudendal nerves) दोनों कुलों में अव्याहत प्रवेश करने वाले पुरोहित बने और उन्होंने वर के लिये वधू और वधू के लिये वर का वरण अर्थात् चुनाव किया। इस बरात में अग्रगामी ब्राह्मण के स्थान पर वह पवित्र संकल्प का अग्नि था जिसके अविच्छेद के लिये वर गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने चला था ।८॥

मन्त्र

सोमो वधूयुरभवदश्विनास्तामुभा वरा ।
सूर्यां यत् पत्ये शंसन्तीं मनसा सविताददात् ॥९॥

(सोमः) स्नातक, वधूयुः, वधू की कामना वाला, अभवत् हुआ (अश्विनौ उभा) दोनों कुल के पुरोहित, वरा वरण करने वाले आस्ताम् हुये, पत् जब, सूर्या पति को चाहे तब उस (पत्ये शंसन्ती) पति को अभिलाषा करने वाली कन्या को (सविता) उसका पिता (मनसां) मनन पूर्वक विचारकर अददात्, देता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूर्या का दूल्हा सोम अर्थात् वीर्य था। अश्विनौ वर अर्थात् खोजने वाले थे। सूर्या यों ही पतिलोक की ओर नहीं चल पड़ी परन्तु पूज्य पिता सविता (brain का Sexual Centre) ने अश्विनौ की सहायता से खोज करके मनन पूर्वक उसे दान दिया। यहां यौगिक अर्थों की महिमा को न जानने के कारण सायण की मति खूब बौंदलायी है उसे यह समझना कठिन हो गया है कि सोम वधूयु था और अश्विनौ वर थे, यह बात कैसे बनी। अन्त को उसने अपने लाल बुझक्कड़ थैले में से यह तत्व ढूंढ निकाला है कि सूर्या का विवाह तो सोम के साथ ही होने वाला था परन्तु अश्विनौ ने पहले पहुंच कर उसे हथिया लिया। परन्तु बिचारे सायण की दुर्गति करने के लिये इसी काण्ड के द्वितीय अनुवाक् का तीसरा मन्त्र इस प्रकार गरज रहा है कि 'सोमस्य जाया प्रथम'। इस 'प्रथम' ने तो सायण की बिल्कुल कमर तोड़ दी है क्योंकि यदि 'प्रथम' पद न होता तो कदाचित् यह कह कर सन्तोष हो जाता कि पहले अश्विनौ सूर्या को ले गये, पीछे सोम ने फिर प्राप्त किया। इस 'प्रथम' ने इस छीना-झपटी का बाजार ही बन्द कर दिया अब प्रश्न यह है कि यदि सायण का अर्थ ठीक नहीं तो ठीक अर्थ क्या है। तो इसका समाधान इस प्रकार है कि 'वर' शब्द का अर्थ दूल्हा नहीं, परन्तु खोजने वाले पुरोहित हैं जो कि स्थान २ पर पूछते फिरते थे कि वर के लिये योग्य वधू और वधू के लिये योग्य वर कहां है। यह बात १४ वें मन्त्र में इस प्रकार स्पष्ट शब्दों में कही है —

'यदश्विना प्रच्छ मानावयातम्' ॥६॥

मन्त्र

मनो अन्या अन आसीद् द्यौरासीदुत च्छदिः
शुक्रावनडवाहावास्तां यदयात् सूर्या पतिम् ॥१०॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(सूर्या) सूर्या (यद्) जब (पतिम्) पति के घर अयात् चली, तब (अस्याः) इसको मनः मनही (अनः आसीत्) रथ था (द्यौः) और द्यौ उस रथ की (च्छदिः) छत (आसीत) थी (शुक्रौ, अनड्वाहौ, औपस्थिक शुक्रवाहिनी नाड़ियां बैल थे ॥१०॥

जब सूर्या पति के घर चली तो मन उसकी गाड़ी थी जिस गाड़ी की छत 'द्यौ' थी और शुक्रौ अर्थात् औपस्थिक रक्त वाहिनियां (Pudendal vessels) उस गाड़ी के बैल थे। उपवृक्क ग्रन्थि बैलों को हांकने वाले थे ॥१०॥

ऋक्सामाभ्यामभिहितौ गावौ ते सामनावैताम्।

श्रोत्रे ते चक्रे आस्तां दिवि पन्थाश्चराचरः ॥११॥

अर्थ—(ऋक् सामाभ्याम्) ऋक् और साम से (अभिहितौ) प्रेरित (ते) तेरे (गावौ दोनों बैल (समानावैताम्) समान चले (ते) तेरे (श्रोत्रे चक्रे आस्तां) कान ही रथ के पहिये हैं (दिवि) उस कामना का (चराचरः पन्थाः) चर अचर सब मार्ग बना ॥११॥

ऋक और साम रूपी गुर्दे के ऊपर की उपवृक ग्रन्थियां हैं, उनसे प्रताड़ित रुधर प्रवाहिनी नाड़ियां तीव्र गामी और समान (
) साथ २ चलने वाले बैल बने। तेरे रथ के जो दोनों पहिये थे तेरे दोनों कान अर्थात् सूर्या को सोम लोक की ओर प्रेरणा करने वाले वे गुण थे जो माता पिता वृद्धजनो तथा अन्य आप्तजनों द्वारा कर्ण मार्ग से हृदय में प्रविष्ट हुए थे। यह शरीर रूपी सम्पूर्ण देवपुरी क्या उसके चर भाग और क्या उसके अचर भाग सभी सूर्या के प्रयाण से आविष्ट हो गये। अतः कहा है कि शरीर रूपी देवपुरी का समस्त चराचर भाग सूर्या के प्रयाण का मार्ग बना ॥११॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्र

शुची ते चक्रे यात्या व्यानो अक्ष आहतः ।
अनो मनस्मयं सूर्यारोहत् प्रयती पतिम् ॥१२॥

(ते) तुम्हारे यात्या, पति के घर जाते हुये (शुची चक्रे) दोनों कान (व्यानो अक्ष, सम्पूर्ण प्राण शक्ति का केन्द्रभूत व्यान, आहतः, ताडित हुआ (पतिम् प्रयती) पति के प्रति जाती हुई (सूर्या) अनो मनस्मयं) अनेक मनोरथों वाली होकर मनोमय रथ पर (अरोहत्) (चढ़ी) ॥१२॥

तेरे दोनों कान अपने अनुराग भाजन के पवित्र चरित्र के श्रवण से पवित्र हो गये । सम्पूर्ण प्राणशक्ति का केन्द्रभूत व्यान वायु आहत हुआ जिससे सारा शरीर सिहर उठा । यह दृश्य था जब सूर्या पति लोक को जाने के लिये रथ पर सवार हुई तब सूर्या अनेक मनोरथों को लेकर मनोमय रथों पर आरूढ़ हुई ॥१२॥

मन्त्र

सूर्याया वहतुः प्रागात् सविता यमवासृजत्
मघासु हन्यन्ते गावः फल्गुनीषु व्युह्यते ।१३

(सूर्यायाः) सूर्या का (वहतुः) रथ (प्रागात्) चला (सविता) जीवात्मा ने (यम्) जिसको (अवासृजत) विदा किया (मघासु) मघानक्षत्र में (गावः) इन्द्रियां हन्यन्ते, प्रेरित की जाती हैं फल्गुनीषु फाल्गुन में वसन्त में व्युह्यते विवाह होता है ।१३॥

सूर्या का सार्थ चला, उसे सविता ने स्वयं विदाई दी अर्थात् इच्छा शक्ति के अधिष्ठाता जीवात्मा ने स्वयं सूर्या को चलने की आज्ञा दी । यह सूर्या की यात्रा मघा नक्षत्र में आरम्भ होने लगती है और फल्गुनी नक्षत्र में सार्थ चल पड़ता है । तात्पर्य है कि सूर्या की गति माघ मास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में आरम्भ होती है और फाल्गुन में वसन्त अपना पूर्ण प्रभाव दिखाता है। माघ मास की चञ्चलता इस प्रकार की है कि मानो बैल रथ में जोतने को हांके जा रहे हों। फाल्गुन की मस्ती ऐसी है मानो सूर्या का सार्थ चल पड़ा। इस प्रसङ्ग में योरोपियन भाष्यकारों ने और दुःख तो यह है कि उन्हीं के पीछे गतानुगतिक होकर इतिहास के प्रकाण्ड विद्वान् श्री जयचन्द्र विद्यालंकार तक ने यहां गो-वध दिखा कर विचित्र लीला की है। आप लिखते हैं कि माघ मास में गौएं मार कर रख ली जाती थीं और वे फाल्गुन तक सड़ा करती थीं। तब विवाह में उस मांस का उपयोग होता था। उन्होंने यह नहीं विचारा कि इसका 'वहतुः' और 'व्यूहते' के साथ कैसे सम्बन्ध जुड़ेगा। क्या मरे हुए बैल रथ में जोते जायेंगे या उन रथों को इतिहास के पण्डित खींच कर ले जायेंगे। इससे तो सायण का अर्थ अच्छा है जिसने 'हन्यन्ते' का अर्थ 'ताड्यन्ते' लिखा है। परन्तु यह उसने भी नहीं सोचा क्या एक महीने तक बैल ही हाँकते रहेंगे। बात यह है कि यहां 'गावः' का अर्थ 'इन्द्रियां' हैं। जिसका प्रमाण शतपथ में इस प्रकार मिलता है 'इन्द्रियं वै वीर्यं गावः' ५-४-३-१०। मनुष्य की मानसिक विचार धाराओं और शारीरिक चेष्टाओं पर सूर्य की किरणों का प्रभाव पड़ता है, उसमें तो अवश्य एक मास में अन्तर आ जाता है, परन्तु बैलों को हांकने में एक महीना नहीं लगता। पं० जयचन्द्र जी विद्वान हैं. कृतकर्मा हैं, हमारे आदरणीय हैं, परन्तु वेद पर अत्याचार करने का अधिकार फिर भी नहीं, यदि उनके हाथों अत्याचार होगा तो मौदगल्य को चिल्लाना ही पड़ेगा ॥१३॥

यदश्विना पृच्छमानावयातं त्रिचक्रेण वहतुं सूर्यायाः।
क्वैकं चक्रं वामासीत् क्व देष्ट्राय तस्थथुः ॥१४॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(अश्विनौ) हे वर अन्वेषक पुरोहितो ! (त्रिचक्रेण) तीन पहिये वाले रथ से (सूर्यायाः) सूर्या के निमित्त (वहतुं) वर को (पृच्छमानौ) पूछताछ करते हुये (अवयातं आये हो (वाम्) तुम दोनों का (एकं) एक (चक्र) चक्र (क्व) कहां आसीत है। (क्व) कहां पर (देष्ट्राय) उपदेश सुनने के निमित्त (तस्थथुः) ठहरे ॥१४॥

प्रायः संसार में जो सन्तानोत्पत्ति देखने में आती है, वह एक शरीर धर्म (Bialogical phanomens) है। वसन्त की हवा चली, लता, विटप, पशुपक्षी सब ग्राम्य-धर्म में प्रवृत्त हुए मनुष्य पर भी वायु का प्रभाव हुआ उसने भी प्रकृति के नियम के सामने सिर झुका दिया इस नियम के अनुसार जो सन्तान होती है उसे वैदिक भाषा में एक चक्र सन्तान कहते हैं परन्तु मनुष्य को परमात्मा ने मनन शक्ति भी दी है। उसके सहारे वह अपना स्वतन्त्र संसार भी बना लेता है। यह अवश्य नहीं कि वह विधाता की वसन्त के साथ चले। स्त्री पुरुष का जोड़ा एक वैज्ञानिक खोज में अथवा एक व्यापारिक उन्नति में लगा हुआ है। जिन दिनों विधाता की वसन्त थी, उन दिनों उनके सामने कोई वैज्ञानिक या व्यापारिक समस्या आ खड़ी हुई। यह उलझन ठीक उस समय सुलझी. जब विधाता की सृष्टि में हेमन्त का प्रादुर्भाव हुआ। सफलता के मारे दम्पति के रोम रोम में नयी उमंगों ने वसन्त का राज्य स्थापित कर लिया।, अब विधाता अपनी वसन्त को रोया करे? इनकी आज ही वसन्त है। यह एक एक दूसरे के गुणों के परिशीलन से प्रादुर्भूत होने वाली वसन्त मनन शक्ति से उत्पन्न हुई। इस लिये इससे उत्पन्न होने वाली संतान विज्ञान की संतान है और इस जोड़े का परस्पर मिलना केवल शरीर-धर्म नहीं, मानस-धर्म (Intellectual Phenomena) भी है। प्रायः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो मनुष्य शरीर-धर्म से ऊंचा उठते हैं, वे इस दूसरी सीढ़ी तक पहुंच पाते हैं और इस प्रकार की सन्तानों को हम द्विचक्र सन्तान कहेंगे। परन्तु जब कोई युगल अपनी वैज्ञानिक खोज अथवा अपनी व्यापारिक हलचल को स्वार्थ सिद्धि के क्षेत्र से ऊंचा उठा कर लोक कल्याण के ऊंचे वायुमण्डल में ले जाता है और अपनी वैज्ञानिक खोज अथवा व्यापारिक हलचल को तथा दम्पति के शरीर सम्बन्ध को लोक-हित द्वारा अपनी प्रभु भी आराधना में साधन बनाता है तब जो सन्तान उत्पन्न होती है उसे त्रिचक्र सन्तान कहते हैं। इस संसार में भूल कर एक चक्र या द्विचक्र सन्तान ही पायी जाती है परन्तु भगवती वेदवाणी मनुष्य को तीसरे चक्र तक पहुंचाना चाहती है और इस बात की ओर विशेष बलपूर्वक ध्यान आकर्षित करने के लिये हर एक दम्पति से पूछती है दो पहिये लेकर चले हो, रथ का तीसरा पहिया कहां खो आये ? इसी बात का अगले दो मन्त्रों में इस प्रकार वर्णन किया है। बसन्त की हवा चली सोम के दो पुरोहित अर्थात् (Pudendal nerves) प्राणशक्ति को ढूंढने चले। उन्हीं को यहां अश्विनौ के नाम से कहा गया है। मन्त्र का अर्थ इस प्रकार है—

मन्त्र

यदश्विना पृच्छमानावयातं त्रिचक्रेण वहतुं सूर्यायाः।
क्वैकं चक्रं वामासीत् क्व देष्ट्राय तस्थथुः ॥१४॥

हे अश्विनौ) पुरोहित लोग (पृच्छमानौ) यद्यातं। पूछताछ करते हुये जो तुम आये (सूर्यायाः) सूर्या के वर के लिये (वहतुं त्रिचक्रेण) तीन चक्रों वाले रथ से आये क्वैकं चक्रम वामसीत् तुम्हारा एक चक्र कहां है (क्व देष्ट्राय तस्थथुः) उपदेश के लिये कहां ठहरे थे ॥१४॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे अश्विनौ ! तुम सूर्या के विवाह के निमित वर के विषय में पूछताछ करने निकले थे। सुना है तुम्हारा रथ त्रिचक्र है और तुम त्रिचक्र रथ पर चढ़ कर आये हो। पर हमने तो तुम्हारे दो ही चक्र देखे हैं। तीसरा चक्र कहां छोड़ आये ? तीसरे चक्र की खोज में कहां रहे ? हे सन्तानोत्पत्ति शुभ कर्म के अध्यक्ष ! तुम जो सूर्या की खोज करते हुये इस निश्चय के साथ निकले कि मैं जरूर सूर्या को ढूंढ निकालूं तब सम्पूर्ण देवों ने अर्थात् शरीर के अंश २ ने तुम्हारा अनुमोदन किया और पूषा (Lumber plexus) ने तो पुत्र की तरह आज्ञा पालन करना मंजूर को। तात्पर्य यह कि दम्पति की इस शुभ कर्म में तब प्रवृत्ति होनी चाहिये, जब अंग २ अनुमोदन करता हो और आध्यात्मिक भावना का आदर्श दिखाने के लिये अगले मन्त्र में अश्विनौ उत्तर देते हैं ॥१४॥

मन्त्र

यदयातं शुभस्पती वरेयं सूर्यामुप।

विश्वे देवा अनुतद् वामजानन् पुत्रः पितरमवृणीत पूषा ॥१५॥

मन्त्र का अथ इस प्रकार है —

हम शुभस्पती, शोभा के पालक श्रेष्ठतमा वरणीया (सूर्यामुप) सूर्या के पास (अयातं) गये थे क्यों उस श्रेष्ठ कुल में ही उत्तम सन्तान प्राप्त हो सकती है, हे अश्विनों ! वाम् तुम दोनों के इस कार्य को विश्वे देवा, सब विद्वान (अनु अजानन्,) प्रशंसा करते हैं अनुमोदन करते हैं, (पूषापुत्रः) सबका भरण पोषण करने वाला पुत्र तो ऐसे कुल के वर को (पितरमवृणीत) पिता स्वीकार करता है। अर्थात् उसके यहां जन्म लेता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पं० आचार्य प्रियव्रत वेद
वाचस्पति

हे विश्व के स्वामी सविता ! आपने हम से पूछा है कि तुम एक पहिया कहां छोड़ आये, उसकी खोज में कहां अटके थे तो हमारा उत्तर यह है कि भगवन् वह पहिया अतिदुर्लभ है। जिस मेधावी के पास वह मिलता है, वही लेने गये थे। तात्पर्य यह कि जो लोग उत्कृष्टतम सन्तान उत्पन्न करना चाहें वे इस सन्तानोत्पत्ति के पूर्व किसी सच्चे आध्यात्मिक गुरु के शरण में जा रहें अथवा उसे अपने पास बुला रखें। तभी उन्हें आदर्श सन्तान की प्राप्ति हो सकती है।

इसी प्रकार की सन्तान की प्राप्ति के लिये गीता में कहा है —

शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽपि जायते 8971

प्राप्य पुण्य कृतांल्लोकान उषित्वा शाश्वतीः समाः। ६.४१

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

अथवा

योगीनामेव कुले भवति धीमताम् ।
एतदुर्लभतमं लोके जन्म यदीदृशम् ॥६.४२॥ १५॥

द्वे ते चक्रे सूर्ये ब्रह्माण ऋतुथा विदुः ।
अथैकं चक्रं यद् गुहा तदद्धातम् इद् विदुः ॥१६॥

शब्दार्थ—सूर्ये - हे सूर्या, (ते) तुम्हारे, (द्वे चक्रे) दोनों चक्रों को (ब्रह्माणः) विद्वान् लोग (ऋतुथा) ऋतु के क्रम से (विदुः) जानते हैं अथ और यत् जो तुम्हारा एकं चक्र एक तीसरा चक्र है। उस गुहा, गुहा में छिपे हुये चक्र को तो (अद्धातय) मनिषी लोग ही (इद् विदुः) जान पाते हैं ॥१६॥

२२५
२६
८९७१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे सूर्या ! दिन और रात, ग्रीष्म, वर्षा और बसन्त इन ऋतुओं में क्रमशः तेरी शक्ति कभी सोम लोक और कभी सूर्य लोक में जाती है अर्थात् कभी ज्ञान के क्षेत्र में प्रवेश करती है और कभी रस के, परन्तु तेरा एक चक्र और भी है वह सुषुम्ना दण्ड में कुण्डलिनी प्रवोध द्वारा चलने वाला तीसरा आध्यात्मिक चक्र भी है वह गुहा में छिपा है उसे मेधावी लोग ही जानते हैं ॥१६॥

मन्त्र

अर्यमणं यजामहे सुबन्धुं पतिवेदनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनात् प्रेतो मुञ्चामि नामुतः ॥१७॥

(अर्यमणं) न्यायकारी (सुबन्धुं) सच्चे बन्धु (पति वेदतम) पति को दिलाने को (यजामहे) पूजा करती है, कि (वन्धनात्) बन्धन से (उर्वारुकमिव) पके खरबूजे के समान (प्रेतः) इस पितृ कुल से (मुञ्जामि छुड़ायें (नामुतः) उस पति कुल से नहीं ।१७॥

अब तक इन १६ मन्त्रों में आध्यात्मिक (अर्थात् शरीर में) क्षेत्र में होने वाला सूर्या का विवाह वर्णन हुआ । अब अगले मन्त्रों में एक कल्पित कन्या का विवाह दिखाया गया है जिसमें सूर्या उपमान रूप में आयेगी। जैसे कि ५२ वें मन्त्र में स्पष्ट है। यह विवाह सबसे पहले कन्या के पिता के घर में उत्तम वर प्रार्थना रूप मंगल आहुतियों से प्रारम्भ होता है। वह प्रार्थना इस प्रकार है – कौन अपने कर्मों के अनुसार कितने सौभाग्य का स्वामी है इस बात का ठीक माप करने वाले सच्चे न्यायकारी अर्यमा भगवान की हम उपासना करते हैं जो हमारा सच्चा बन्धु है, बन्धन में आया हुआ है और वही हमें सच्चा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पति दिलाने वाला है। अब कन्या कहती है-हेप्रभो ! अब मेरा इस कुल रूपी बेल से टूटने का समय आया है। ऐसी कृपा कीजिये कि यदि कभी मुझे पितृ-कुल और पति-कुल में से एक छोड़ना पड़े तो यह कुल भले ही छूट जाय, पर वह कुल कभी न छूटे ॥१७॥

मन्त्र

प्रेतो मुञ्चामि नामुतः सुबद्धाममुतस्करम् ।
यथेयमिन्द्र मीढ्वः सुपुत्रा सुभगासति ॥१८॥

(इतः) इस पितृ कुल से (मुञ्चामि) पृथक करता हूं (अमुतः) उस पति कुल से नहीं (अमुतः) उस पति कुल से तो (सुबद्धाम्) अच्छी प्रकार से बंधने वाली करता हूँ हे (मीढवः इन्द्र) सुखवर्षक इन्द्र (यथा) जैसे (इयं यह (सुपुत्रा) अच्छे पुत्रों वाली होगी तभी (सुभगासति) सुभगा होगी ॥१८।

अब कन्या कुल के पुरोहित अथवा पिता कहते हैं। हे प्रभो ! आपको यह आज्ञा है कि इस त्याग में ही हमारा कल्याण है। यह लाड़ चाव से पाली कन्या आज दूर देश भेजनी होगी और इसे यह कठोर आदेश भी करना होगा कि तू इस कुल से छूट जा और उस कुल में ऐसी बंध जा कि वहीं की हो रह। इसी में इसका सौभाग्य है हे संसार पर सुखों की वर्षा करने वाले इन्द्र ! यह जब सुपुत्रा होगी तभी यह सुभगा होगी। इस लिये यह त्याग करना ही होगा ॥१८॥

मन्त्र

प्रत्वा मुञ्चामि वरुणस्य पाशाद् येन त्वा बध्नात् सविता सुशेवाः
ऋतस्य योनौ सुकृतस्य लोके स्योनं ते अस्तु सहसंभलायै ॥१९॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे पुत्री (त्वा) तुम को (वरुणस्य पाशाद) राजनियम के बन्धन से (प्रमुञ्चामि) छुड़ाता हूँ (येन) जिस बन्धन से (सुशेवाः) सविता उत्तम रीति से सेवा करने वाला राजा अर्थात् राज नियम। (त्वा) तुझको (अवध्नात बांधा था (ऋतस्य) नये ज्ञान के योनौ) क्षेत्र में तथा (सुकृतस्य) पुण्य कर्तव्य की (लोके) भूमि में (सह संभलायै) पति के साथ तुझ मधुर भाषिणी का (स्योनं) सुख कल्याण (अस्तु) हो ॥१९॥

हे पुत्री! अब तक तू सविता अर्थात् राजनियम के अनेक बन्धनों में बंधी हुई थी जिनके उलंघन से वरुण के पाश में बंध जाती अर्थात् राज दण्ड की भागिनी होती। यह ठीक है कि आज मैं तुझे अपने कुल से पृथक किया चाहता हूं परन्तु वरुण के पास से भी तो छुड़वा रहा हूँ और तुझे नये ज्ञान के क्षेत्र में और स्वतन्त्र होकर एक नये उत्तम कर्म करने के अधिकार क्षेत्र में भी तो भेज रहा हूँ। प्रभु की कृपा से संभल अर्थात् पति समेत तेरा कल्याण हो। 'संभल' शब्द 'भल निरूपण' इस धातु से बना है। इसका प्रचलित अर्थ 'आपस में मिलाने वाला' लिया जाता है, परन्तु धातु से इसमें एक विशेष चमत्कार उत्पन्न हो जाता है। निरूपण का अर्थ है ध्यान पूर्वक देखना। तो 'संभल' का अर्थ अच्छी तरह देख भाल कर पहिचान करने वाला अर्थात् सच्चा पारखी हुआ ॥१९॥

मन्त्र

भगस्त्वेतो नयतु हस्तगृह्याश्विना त्वा प्र वहतां रथेन।
गृहान् गच्छगृहपत्नी यथासो वशिनी त्वं विदथमा वदासि ॥२०॥

(त्वा) हे कन्ये तुझको (भगः) ऐश्वर्य वाला वर (हस्तगृह्य) हाथ पकड़ कर (इतः) हमारे घर से (नयतु) ले जावे। (अश्विनौ) दोनों कुल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के पुरोहित (त्वा) तुझको (रथेन) रथ पर (प्रवहतां) चढावें (गृह-पत्नी, घर की मालकिन होकर गृहानगच्छ) घर में जा (वशिनी) सब को वश में करने वाली (त्वं) तू (यथासो) जिस प्रकार से (विदथमा) यज्ञ और उत्सव में (वदासि) सुन्दर बोलने वाली हो ॥२७॥

प्रभु कृपा करें कि तेरा पति मूर्तिमान सौभाग्य होकर तेरा पाणि-ग्रहण करे। दोनों कुलों के विद्वान पुरोहित तुझे रथ पर चढ़ावें। नये घर की मालकिन बन कर नये घर जा और वहां सब यज्ञ और उत्सवों में ऐसी विराजमान हो मानों सब तेरे वश में हों ।२८॥

मन्त्र

इह प्रियं प्रजायै ते समृध्यतामस्मिन् गृहे गार्हपत्याय जागृहि।
एना पत्या तन्वं सं स्पृशस्वाथ जिर्विर्विदथमा वदासि ॥२१॥

हे पुत्री (ते) तेरी (प्रजायै) सन्तान के लिये (प्रियं) प्रिय पदार्थ (समृध्यताम्) प्राप्त हों (अस्मिन् गहे) इस पति के घर में (गार्हपत्याय) गृह पति की कुल परम्पराओं की रक्षा के लिये (जागृहि) जागरूक हो। (एना पत्या) इस पति के साथ (तन्वं स्पृशस्व) शरीर को स्पर्श कर (अथ) इसके बाद (जिर्विवृद्धा) दीर्घ जीवी होकर (विदथम्) ज्ञान यज्ञों में (आवदासि) बोला कर ॥२१।

यहां से कन्या के साथ उसके लिये प्रस्तुत वर का परिचय प्रारम्भ होता है जो गार्हपत्यागार में कराया जाता है — हे पुत्री ! इस गृह-स्थाश्रम के प्रवेश से तुझे उत्तम स्थान का लाभ प्राप्त हो और तेरी सन्तान को सदा प्रिय सिद्धि हो। तू जिसमें जावे उस कुल की पवित्र परम्पराओं की रक्षा के लिये सदा जागरूक रह। जिस पति का आज हम तेरे लिये प्रस्ताव करने लगे हैं उसका और तुम्हारा शरीर दोनों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दूसरे के अर्पण हैं। तू (जिविः) चिरंजीव रह और तुझे सदा आनन्दोत्सवों में बोलने का सौभाग्य प्राप्त हो।'२१॥

मन्त्र

इहैव स्तं मा वि यौष्टं विश्वमायुर्व्यश्नुतम् ।
क्रीडन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वस्तकौ ॥२२॥

शब्दार्थ–हे वर वधू (इह एव स्त) तुम दोनों इस गृहस्थाश्रम में रहो (मा) मत (वियौष्ट) वियुक्त हो (विश्वं) सम्पूर्ण (आयु) आयु को (अश्नुतम्) भोगो (सु अस्तकौ) उत्तम गृहयुक्त होकर (मोदयानौ) प्रसन्न होते हुये (पुत्रैःनप्तृभि) पुत्रों और पोतों के साथ (क्रीडन्तों) खेलते हुए (अश्नुतम) भोगो ॥२२॥

अब कन्या के कुल का पुरोहित आशीर्वचन उच्चारण करता है – हे वर और वधू! इस गृहस्थ में तुम्हारी जोड़ी हमेशा बनी रहे, तुम कभी वियुक्त न हो। पूर्ण आयु भोगने वाले बनो। बेटों के साथ खेलो और पोतों के मुख दर्शन का आनन्द प्राप्त करो और सदा स्वस्थ रहो ॥२२॥

मन्त्र

पूर्वापरं चरतो माययैतौ शिशू क्रीडन्तौ परि यातोऽर्णवम् ।
विश्वान्यो भुवना विचष्ट ऋतूंरन्यो विदधज्जायसे नवः ॥२३॥

(एतौ शिशू) ये प्रकृति माता के दो बच्चे (मापया) प्रेम से (पूर्वापरं) पहले पीछे (परियातोऽर्णवम्) आकाश में चारों ओर (क्रीडन्तौ चरतः) मानो खेलते हुये घूम रहे हैं (अन्यः) एक सूर्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(विश्व भुवना) सम्पूर्ण संसार को (विचष्टे) प्रकाशित कर रहा है (अन्यः) दूसरा चन्द्रमा (ऋतूंन् विदधत्) ऋतुओं को धारण करता हुआ प्रतिदिन (नवः जायसे) नया उत्पन्न होता है। उसी प्रकार तुम दोनों वर वधू हो इति वाक्यः शेषः ॥२३॥

देखो ! पहिले पीछे करके बारी बारी से प्रकृति माता के ये दो प्यारे बच्चे पूर्व से पश्चिम समुद्र की ओर जाते हैं। उनमें से एक सूर्य सारे संसार को प्रकाशित करता है और दूसरा नित्य नया रूप धारण करके नई ऋतुएं पैदा करता है अथवा ऋतु धर्म पैदा करता है ॥२३॥

मन्त्र

नवोनवो भवसि जायमानोऽह्नां केतुरुषसामेष्यग्रम् ।
भागं देवेभ्यो वि दधास्यायन् प्र चन्द्रमस्तिरसे दीर्घमायुः॥२४॥

हे वर ! (अह्नां केतुः) दिन की पताका के समान (उषसामअग्रम) दिन के प्रारम्भ में सूर्य के समान (एषि) आते हो और (नवो नवो भवसि) नित्य प्रति नूतन होते हो (देवेभ्यः भागं विदधासि) श्रेष्ठ विद्वानों को भाग प्रदान करते हो (आयन) सबको प्राप्त होकर (चन्द्रमः) चन्द्रमा के समान तू (दीर्घमआयुः) दीर्घ जीवन (प्रतिरसे) देते हो ॥२४॥

हे वर रूप पूज्य अतिथे ! आपके अन्दर हम चन्द्र और सूर्य दोनों का रूप देखते हैं। प्रत्येक दिन उषा काल में जब आप उठते हैं तो हमारे लिये वहीं से दिन प्रारम्भ होता है। प्रत्येक दिन प्रातः काल आप नई उमंगे लेकर प्रादुर्भूत होते हैं। नये-नये बन कर प्रादुर्भूत होते हैं। यह आपका सूर्य रूप है। नानाविध देव सभा करते हुये जब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप थक जाते हैं तो मानो आपकी कलाएं क्षीण होती हैं, परन्तु भोजन और विश्राम से जब आपके अन्दर ताजगी आ जाती है तो मानों पूर्ण चन्द्र का उदय हो जाता है। इसी भाव को वर्तमान कवियों में कवि कुल गुरु कालिदास ने इस प्रकार दिखाया है—

पर्यायपीतस्य सुरैर्हिमांशोः कलाक्षयः श्लाघ्यतरो हि वृद्धेः ।

इस प्रकार कुल चन्द्र ! तुम स्वयं कष्ट सहन करके हमें दीर्घायुष्य प्रदान करने आये हों ॥२४॥

मन्त्र

परा देहि शामुल्यं ब्रह्मभ्यो वि भजा वसु ।

कृत्यैषा पद्वती भूत्वा जाया विशते पतिम् ॥२५॥

हे वर (शामुल्यं) कृपणता के भाव को (परादेहि) दूर फेंक दो (ब्रह्मभ्यो) ब्राह्मणों के लिये (वसु) धन को (विभजा) बांट (एषा जाया) यह स्त्री यद्यपि सुशीला है तथापि तुम्हारे घर में (पद्वती कृत्या) हिंसा करने वाली सेना के समान (भूत्वा) होकर (पतिम) तुझ पति को (विशते) प्राप्त कर रही है। २५॥

परन्तु हे सौम्य ! इस समय हमें यह कह देना आवश्यक है कि कहीं अनुचित रूप से इसके वश में न हो जाना। यह हमारी कन्या है तो क्या हुआ, परन्तु यह भी कभी तुम्हें उदारता के मार्ग से हटाना चाहे तो इस की मत सुनना। शामुल्य अर्थात् कंजूसी को परे भगाना। ब्राह्मणों की पूजा को सबसे उत्तम उपयोग समझना, क्योंकि बहुधा देखा जाता है मूर्तिमती जंगम कूट रचना बन कर स्त्रियां पतियों को ग्रस लेती हैं ॥२५॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्र

नीललोहितं भवति कृत्यासक्तिर्व्यज्यते ।
एधन्ते अस्या ज्ञातयः पतिर्बन्धेषु बध्यते ॥२६॥

(नीललोहितं) नीला और लाल रंग का (भवति) हो जाता है और (कृत्या) हिंसक (आसक्तिः) आसक्ति (व्यज्यते) प्रगट होती है (अस्माः) इस स्त्री के (ज्ञातयः) भाई बन्धु (एधन्ते) बढ़ते हैं (पतिः) स्वामी (वन्धेषु) ऋणादि के बन्धन में (बध्यते) बांधा जाता है ॥२६॥

जहां ऐसी कूट रचना में पति आसक्त हो जाते हैं तो वह आसक्ति देर तक छिपी नहीं रहती। आलस्य और काम के वशीभूत पति का खून नीला हो जाता है और इसी से आसक्ति प्रगट हो जाती है और इस प्रकार के पतियों को वश में करने वाली स्त्रियों के घर वाले तो फलते फूलते हैं और पति प्रति दिन ऋण के बन्धन में बंधता जाता है । २६॥

मन्त्र

अश्लीला तनूर्भवति रुशती पापयामुया ।
पतिर्यद् बध्वो वाससः स्वमङ्गमभ्यूर्णुते ॥२७॥

शब्दार्थ- (यद्) यदि (पतिः) पति (वध्वः) वधू के (वाससः) वस्त्र से (स्वम् अङ्गम्) अपने शरीर को (अभिऊर्णते) आच्छादित करता है तो। (अमुया) इस (पापया) दुष्कर्म रुपी पाप से (कशती) सुन्दर शोभायुक्त (तनूः) शरीर भी (अश्लीला) गन्दा शोभारहित (भवति)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता है ॥२५॥

अब गार्हपत्यागार में बैठे हुए पति कुल के पुरोहित जी कहते हैं कि सौम्य ! मर्द की मर्दानगी और शोभा इसी में है कि वह स्वयं कमा कर पत्नी को खिलाये। इसके विपरीत धिक्कार है उन पतियों को जो ससुराल के सिर जीना चाहते हैं। विवाह करने से पहले ससुर से रुपये ठहराते हैं और विवाह के बाद भी लाओ लाओ की रट लगाते नहीं थकते। याद रखो जब पति वधू की चादर में अपने अंग छिपाता है तो यह उज्वल तनु उस ग्लानिकारक चादर से घृणा अर्थात् अश्लीलता का उत्पादक हो जाता है और सब उसे परे २ कहते हैं ॥२७॥

मन्त्र

आशसनं विशसनमथो अधिविकर्त्तनम् ।

सूर्यायाः पश्य रूपाणि तानि ब्रह्मोत शुम्भति ॥२८॥

शब्दार्थ—(सूर्यायाः) जवानी की प्राण शक्ति के (तानि) उन तीन (आशंसनं) अधिक मांगना (विशसन) बिगड़ जाना और (अधिविकर्त्तनम्) अलग कर देना। इन तीनों रूपों (ब्रह्मा उत) वेद ज्ञानी विद्वान ही (शुम्भति) शुद्ध करता है, उनका शमन करता है ॥२८॥

यह ठीक है कि ऐसे मंगल समय में ऐसे कटु वचन उच्चारण करना अच्छा नहीं। परन्तु ब्राह्मण का यह कठोर कर्तव्य है कि वह ऐसे समय में भी ऐसे कटु वचन कहे, क्योंकि न कहने से और समय पर तुम्हें सावधान न करने से इससे भी अधिक अमंगल होने की आशङ्का है। इस दृष्टि से विचारो तो यही उपयुक्त समय है इन बातों को कहने का, और यदि ब्राह्मण ऐसे कटु सत्य नहीं कहेगा तो कौन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहेगा। इस लिये सुनो - सूर्या के तीन रूप हैं— आशसनं, विशसनं और अधिविकर्तनम्। आशसनं अर्थात् हर दम मांगना यदि इच्छा पूरी न हो तो विशसनं अर्थात् बिगड़ बैठना और काटने को दौड़ना। और अधिविकर्तनम् अर्थात् कलह करके घर को घर से अलग कर देना यह सूर्या अर्थात् जवानी (प्राणशक्ति) चाहे स्त्री में और चाहे पुरुष में हो जब अनुचित रूप धारण कर लेती है तो यही तीन रूप होते हैं। इन्हे कोई ब्राह्मण ही सुधार सकता है और इसी लिये कर्तव्य से विवश होकर ब्राह्मण इस समय ऐसे वचन कह रहा है ॥२८॥

मन्त्र

तृष्टमेतत् कटुकमपाष्ठवद् विषवन्न तदत्तवे ।
सूर्यां यो ब्रह्मा वेद स इद् वाधूयमर्हति ॥२९॥

शब्दार्थ—(एतत्) यह उपदेश रूपी भोजन (तृष्टम्) दाहकारी है (कटुकम्) कड़वा (अपाष्ठवद्) घृणित वस्तु के समान है (एतद् अत्तवे) यह खाने वाले के लिये (यो) जो (ब्रह्मा) विद्वान ब्राह्मण (सूर्या) सूर्या को (वेद) जानता है उसके लिये (न) नहीं है और वही ही (वाधूयम्) वैवाहिक कार्य (अर्हति) करा सकता है ॥२९॥

यह ठीक है कि उपदेश रूपी भोजन जो मैं इस समय थाली में परोस रहा हूँ वह दाहकारी, कटु और जी मचलाने वाला है वह विष समान है, उसका गले से नीचे उतरना कठिन है। परन्तु वाधूय अर्थात् वैवाहिक कर्म कराने का अधिकार तो उसी ब्राह्मण को है जो सूर्या के मर्म को पहिचानता है ॥२९॥

मन्त्र

स इत् तत् स्योनं हरति ब्रह्मा वासः सुमङ्गलम् ।
प्रायश्चित्तिं यो अध्येति येन जाया न रिष्यति ॥३०॥ (३)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शब्दार्थ—(स:इत) वह ब्रह्मवेत्ता ही (तत्) उस (सुमङ्गलम) शुभ मङ्गलमय (वास:) वस्त्र को (स्योनम्) सुख पूर्वक (हरति) ले सकता है (यः प्रायश्चित्तिम्) प्रायश्चित्तीय विधि को (अध्येति) जानता है (येन) जिससे (जाया) पत्नी न (रिष्यति) अरिष्ट को नहीं प्राप्त होती है ॥३०॥

विवाह में ब्राह्मण को उपहार रूप में वाधूय वस्त्र नाम से सुन्दर सुमंगल वस्त्र दिया जाता है पर उस वस्त्र को लेने का अधिकारी वही है जो उन प्रायश्चित्तिः अर्थात् दोष निवारक मार्गों को भली प्रकार पढ़ता है जिनके द्वारा पत्नी का कभी मार्ग भ्रष्ट नहीं होता और उसका अरिष्ट नहीं होता ॥३०॥

मन्त्र

युवं भगं सं भरतं समृद्धमृतं वदन्तावृतोद्येषु ।

ब्रह्मणस्पते पतिमस्यै रोचय चारु संभलो वदतु वाचमेताम्॥३१॥

शब्दार्थ—(युवं) तुम दोनों वर कन्या (ऋतोद्येषु) ज्ञान चर्चाओं में (ऋतं वदन्तौ) सत्य बोलते हुये (भगं समृद्धमेताम्) ऐश्वर्य शाली धन को बटोरो (ब्रह्मणस्पते) हे विद्वान (अस्यै पतिम रोचय) इसके लिये पति के प्रति रुचि कराओ और पति (एताम्) इसको प्रियवाणी (वदतु) बोले ॥३१॥

अब कन्या पक्ष का पुरोहित वर और कन्या से कहता है— प्रभु करे कि तुम्हारे घर में अनेक ऋतोद्य अर्थात् ज्ञान-चर्चा के उत्सव हों और उनमें ऋत भाषण करते हुये तुम खूब भग अर्थात् सौभाग्य बटोरो। अब कन्या पक्ष का पुरोहित वर पक्ष के पुरोहित से कहता है – हे ब्राह्मण श्रेष्ठ ! कुछ ऐसा रचना रचिये कि पति इसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्यारा हो और उस पारखा को यह प्यारी हो। वह सदा इससे मीठी वाणी बोले ॥३१॥

मन्त्र

इहेदसाथ न परो ममाथेमं गावः प्रजया वर्धयाथ ।

शुभं यतीरुस्त्रियाःसोमवर्चसो विश्वे देवाःक्रन्निह बो मनांसि ।३२

गावः हे गौओं ! (इहइत्) यहीं पर (असाथ) ठहरो (न परा) अन्य देश में नहीं (गमत्थ) जावो (इमं) इस यजमान को (प्रजयावर्धयाथ) प्रजा से बढ़ाओ हे (उस्त्रियाः) गौवों (शुभपतीः) तुम्हारी यात्रा शुभ हो (वर्चसःसोम) तुम्हारा दूध कान्ति देने वाला हो (विश्वे देवाः) सब देव (वःमनांसि) तुम्हारे मन को (इहक्रत) यहां लगायें ३२

यहां से गोदान प्रारम्भ होता है। गोदान के समय गौओं के व्याज से समस्त समृद्धियों को सम्बोधन करके कहते हैं—हे गौओ ! बस तुम यहीं रहो, कहीं न जाओ। इस यजमान को प्रजा से समृद्ध करो। तुम्हारी यात्रा शुभ हो। तुम्हारा सोम अर्थात् दूध हो 'सोमः पयः' शतपथ १२.७.३.१३। सब देव गण तुम्हारे मन को यहां बसा लें ॥३२॥

मन्त्र

इमं गावः प्रजया सं विशाथायं देवानां न मिनाति भागम् ।

अस्मै वः पूषा मरुतश्च सर्वे अस्मै वो धाता सविता सुवाति ।३३

शब्दार्थ— गाः) हे गावो (अयं) यह यजमान वर (देवानां भागम् न मिनाति) विद्वानों के भागों को नहीं हड़पता (इमं) इस को (प्रजा) से (संविशाथ) प्राप्त होवो (वः) तुम्हारे (धाता) मरुत (सर्वे) सभी (अस्मै) इस यजमान के लिये, तुम्हें प्रेरित करते हैं (वः सुवाति) ॥३३॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे गौओ ! तुम देवी हो। जब यह देवों का भाग नहीं हड़पता तो तुम भी इसे प्रजा से आवाद करो। हे मरुतो ! हे धाता ! तुम्हारे इस यजमान के लिये पूषा, मरुत, धाता और सविता सबके सब तुम्हें यह प्रेरणा करते हैं कि तुम इस यजमान वर की सेवा करो॥३३॥

मन्त्र

अनृक्षरा ऋजवःसन्तु पन्थानो येभिः सखायो सन्ति नो वरेयम्।
सं भगेन समर्यम्णा सं धाता सृजतु वर्चसा ॥३४॥

अब सब मिल कर प्रार्थना करते हैं — हमारे वे मार्ग जिनसे हमारे मित्र उद्दिष्ठ स्थान पर पहुंचते हैं — निर्विघ्न हों और सीधे तथा सरल हों। विधाता हम पर ऐसी कृपा करें कि हम सौभाग्य से सम्पत्ति से संयुक्त हों और वर्चस् अर्थात् आकर्षण शक्ति से संयुक्त हों ॥३४॥

मन्त्र

यच्च वर्चो अक्षेषु सुरायां च यदाहितम्।
यद् गोष्वश्विना वर्चस्तेनेमां वर्चसावतम् ॥३५॥

(यत्) जो (वर्चः) तेज (अक्षेषु) द्यूतों में (च) और (यद्) जो (सुरायां) शराब में (आहितम्) स्थित है, भरा है (यद्) जो (गोषु) गौवों में (वर्चः) तेज बल हे अश्विना (तेन वर्चसा) उन तीनों तेज, ओज, बलसे (इमां) इस (कन्या) सहेली की (अवतम्) रक्षा करो ॥३५॥

अब कन्या को शृंगार की सामग्री प्रदान की जाती है और वह स्नान के लिये भेजी जाती है। ऐसे समय मानों सब सहेलियां मिल कर दोनों कुलों के पुरोहितों से यह मांगती हैं कि आपकी कृपा से हमारी सखी का शृंगार ऐसा सच्चा सिद्ध हो कि उससे आकृष्ट हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर यदि पति में कोई छिपे दुर्व्यसन हों तो वह उन्हें भी भूल जाय वे कहती हैं – हे पुरोहितो ! जो मादकता जूए (द्यूतं) में है जो मादकता शराब में है और जो तेज गौओं में है अर्थात् उनके घी दूध मक्खन में जो तेज है उन सबसे हमारी सहेली को भरपूर कर दीजिये ॥३५॥

मन्त्र

येन महानध्न्या जघनमश्विना येन वा सुरा ।
येनाक्षा अभ्यषिच्यन्त तेनेमां वर्चसावतम् ॥३६॥

(येन) जिस (महान्) महा पुरुष (अध्न्या) गौका (जघनम्) पीछा (येन वासुरा) और जिससे शराब (येनाक्षा) जिससे (द्यूत) सींचे गये हैं। हे (अश्विना) दोनों कुल के परोहितो (तेन) उस तेज से (इमां) इस सहेली को (अवतम्) तृप्त कर दो ॥३६॥

अगले मन्त्र में उस जाकर्षक के साधन की ओर इशारा है जिस से महा पुरुष पुरुषों में, गाय का पिछला भाग उसके सब अंगों में सुरा मादक द्रव्यों में और द्यूत सद्य फल प्रदों में मूर्धाभिषिक्त कहलाये, उन सब आकर्षणों से हमारी सहेली को भरपूर कर दीजिये अर्थात इसमें हृदय की विशालता परोपकार, बुद्धि, उत्साहवर्धकता और सद्य फल प्रदता या यों कहिये कि सदा हंस मुखपन एक इकट्ठे हो कर रहें ॥३६॥

मन्त्र

यो अनिध्मो दीदयदप्स्व न्तर्यं विप्रास ईडते अध्वरेषु ।
अपां नपान्मधुमतीरपो दा याभिरिन्द्रो वावृधे वीर्यावान् ॥३७॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(यः) जो (अनिध्मो) बिना इन्धन के (दीदयद्) प्रकाशित होता है (अप्सु) जल के (अन्तः) मध्य में है जिसको (विप्रास) वेदज्ञ विद्वान लोग (अध्वरेषु) यज्ञों में (इडते) स्तुति करते हैं। (याभिः) जिन से (वीर्यावान इन्द्रः) वीर्य शाली ऐश्वर्य सम्पन्न राजा (वावृधे) बढ़ता है वह (अपां नपात्) परमेश्वर (मधुमतीः) मधुर स्नेह युक्त (अपः) जलधारा को (दाः) देवे ॥३७॥

इस मन्त्र में स्नान की भूमिका है। स्नान के लिये जल की अपेक्षा है, अतः जल की प्रार्थना है परन्तु क्या अनोखी प्रार्थना है कि जल मांगने चले हैं अग्नि से ! इसी से स्पष्ट है कि जल तो यहां व्याजमात्र है। इस पवित्र मंगल समय में सब मिलकर भगवान से इसकी प्रेम धारा की याचना कर रहे हैं। यहां 'अपां नपात्' शब्द से परम अग्नि भगवान और द्विजों के हृदयों में जलने वाला व्रत रूपी अग्नि लिया गया है। 'आपः' से तात्पर्य दो चीजों से है। एक जगह मनु महाराज ने 'आपो नारा इति प्रोक्ताः' कहा है अर्थात् इस ब्रह्माण्ड में बहती हुई पिण्ड धारा एक अर्थ हुआ। दूसरा शरीर में बहती हुई नानाविध प्राण धारा अर्थ है – 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे' 'आपः' शब्द के इन दो अर्थ समझ लेने से सम्पूर्ण अर्थ स्पष्ट हो जायगा। वह अपात् नपात् अर्थात् न गिरने देने वाला वह अनोखा अग्नि जो बिना ईंधन के जलता है और जलधाराओं में भी चमकता है और बुझता नहीं, जिसकी उपासना विद्वान लोग यज्ञों में करते हैं, जिसकी कृपा से वीर्यवान राजा अपने राज्य की वृद्धि करता है। वह हमें अपनी स्नेहधारा के मधु से भरी जलधाराएं प्रदान करे ॥३७॥

मन्त्र

इदमहं रुशन्तं ग्राभं तनूदूषिमपोहामि ।
यो भद्रो रोचनस्तमुदचामि ॥३८॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(इदम्) यह (अहम्) मैं (रुशन्तं) नाश करने वाले (तनूदूषिम) शरीरों को दूषित करने वाले (ग्राभं) जकड़ने वाले को (अप अहामि) शरीर से दूर करता हूँ (य) जो (भद्रः) कल्याणकारी (रोचनः) सुन्दर वर्ण वाले (तम्) उसको (उद् अचामि) उपर धारण करता हूँ ॥३८॥

अब कन्या को उबटन प्रदान करते हैं। उस समय यह वचन पढ़ा जाता है। शृंगार दो प्रकार के हैं एक वह जो देखने में सुन्दर और एक वे जो क्षण भर के लिये त्वचा को नर्म कर देने वाले हैं, पर कुछ काल के निरन्तर व्यवहार से त्वचा को स्थायी हानि पहुँचा देते हैं। मैं उस आपात सुन्दर परन्तु परिणाम में तनुदूषक अङ्गलेप को दूर भगाता हूं और जो कल्याणकारी और वास्तविक सौन्दर्य उत्पन्न करने वाला है उसे उपहार करता हूँ ॥३८॥

मन्त्र

आस्यै ब्राह्मणाः स्नपनीर्हरन्त्ववीरघ्नीरुदजन्त्वापः ।
अर्यम्णो अग्निं पर्येतु पूषन् प्रतीक्षन्ते श्वशुरो देवरश्च ॥३९॥

(ब्राह्मणा) वेदज्ञ विद्वान (अस्यै) इस कन्या के लिये (स्नप्नौः) नहलाने के योग्य (अपः) जलों को (आहरन्त) लावें (अवीरध्नी) वीर सन्तान को नाश न करने वाली (अपः) जलों को (इद् अजन्तु) प्राप्त करायें (अर्यम्णः) परमात्मा के (अग्निम्) अग्रगन्ता रूप की (पर्येतु) प्रदक्षिणा करें (पूषन) पोषण करने वाला (श्वशुरः देवरश्च) श्वशुर और देवर (प्रतीक्षन्ते) प्रतीक्षा करते हैं ॥३९॥

आज यह हमारी लाडली मंगल स्नान के लिये चली है। इसे ब्राह्मणों के हाथ से दिया जल मिले और वह जल इसे ऐसे पहुंचे, जिसके प्रभाव से यह वीर-प्रसू हो। आज यह नये घर की स्वामिनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने जा रही है। स्वामित्व के अधिष्ठाता भगवान अर्यमा की दी हुई अग्नि की यह भली प्रकार परिक्रमा करे अर्थात् देखभाल करे। हे पाणिग्रहण करने वाली ऊषा ! हम जानते हैं कि आप इसके श्वसुर अर्थात् आपके पिता और देवर अर्थात् आपके भाई इस प्रतीक्षा में खड़े हैं कि कब यह स्नान करके वधू वेष पहिन कर बाहर आये ॥३६॥

मन्त्र

शं ते हिरण्यं शमु सन्त्वापः शं मेथिर्भवतु शं युगस्य तर्द्म ।
शं त आपः शतपवित्रा भवन्तु शमु पत्या तन्वं सं स्पृशस्व ॥४०

हे नव वधू (तेहिरण्यंशम्) तेरे लिये सुवर्ण आदि के आभूषण कल्याणकारी हों (आपः शं उसन्तु) जल भी तुझे कल्याणकारी हों (मेथिः) आपस का मेल (युगस्य) तुझ युगल जोड़ी का (तर्द्म) तृण का बना आसन (शम) सुखकारक (शत पवित्रा आपः) सैकड़ों को पवित्र करने वाले (आपः) जल (भवन्तु) होवें (पत्या) पति से (तन्वं सं स्पृशस्व) शरीर का मेल करो ॥४०॥

सजनि ! हम तुझे क्या कह सकते हैं पर यह जो आभूषणादि उपहार कर रहे हैं यह सब तेरे लिये मंगलमय हों यह स्नान का जल तेरे लिये मंगलमय हो तेरे लिये नये मेल मिलाप मंगलकारी हों। और वह नया गृहस्थ रूपी जूए का भार तेरे कन्धों पर पड़ा चाहता है, तेरे लिये मंगल रूप हो। तू अकेली जल से न नहा, तेरे हाथों सैकड़ों का स्नान हो। वधू और वर का मेल मंगलकारी हो ॥४०॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्र

खे रथस्य खेऽनसः खे युगस्य शतक्रतो ।

अपालामिन्द्र त्रिष्पूत्वाकृणोः सूर्यत्वचम् ॥४१॥

हे ! (शतक्रतो) सैकड़ों कर्म करने वाले (इन्द्र) ऐश्वर्य संपन्न यजमान इस (अपालां) अपालित कन्या को (खे रथस्य) इन्द्रियों के रमण करने वाले शरीर (खे ऽनस) भार ढोने वाले शरीर (खे युगस्य) किसी उत्तरदायित्व को ढोने में समर्थ इन (त्रिष्पूत्वा) तीन प्रकार से पवित्र कर (सूर्य त्वचम्) सूर्य के समान कान्तियुक्त त्वचा वाली (अकृणोः) कर दिये हों ॥४१॥

अब पुरोहित, कन्या के पिता से कहते हैं कि धन्य हो, इन्द्र अर्थात् यजमान ! तुमने कैसी योग्य कन्या बनाई है इसे तुमने तीनों प्रकार से पवित्र किया है। जब पैदा हुई थी तब अपाला थी बेडोल थी परन्तु अब यह तीनों आकाश अर्थात् तीनों प्रकार के दुनियां के श्रृंगार जानती है। रथ के आकाश अर्थात् नागरिक जीवन के श्रृंगार बैलगाड़ी के आकाश अर्थात घी दूध आदि से भरे ग्राम्य जीवन का सौन्दर्य और गाड़ी जूए के आकाश अर्थात् निरन्तर उद्योग शीलता से उत्पन्न होने वाली Smartness इन तीनों के प्रवाह से इसकी त्वचा जगमगा उठे। यह अलंकृत यौवना भी है। सुपुष्ट यौवना और समुत्कीर्ण यौवना भी है ॥४१॥

मन्त्र

आशासाना सौमनसं प्रजां सौभाग्यं रयिम् ।

पत्युरनुव्रता भूत्वा सं नह्यस्वामृताय कम् ॥४२॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(सौमनसं) उत्तम चित्त (प्रजाम्) उत्तम सन्तान (सौभाग्यम्) उत्तम सौभाग्य (रयिम्) और धन की (आशासाना) चाहना करने वाली इस उपरोक्त (अमृताय) अमृत के लिये (पत्युरनुव्रता भूत्वा) पति के अनुकूल होकर (सं नह्यस्व) अपनी कमर कस लो ॥४२॥

अब स्नानगृह में प्रवेश करती हुई को पुरोहित जी कहते हैं कि हे बेटी ! सबकी मंगल कामनाओं से अपना जी भर ले। प्रभु से प्रजा सौभाग्य और लक्ष्मी मांग। अब तुझे इनकी प्राप्ति के लिये सत्य, यश और श्री रूप अमृत की सेवा करनी है। तो यह अमृत व्रत का रूप धारण करके तेरे पति के हृदय में विराजमान है। तू उसकी अनुव्रता बन और इसके लिये तू अपनी कमर खूब कस ले॥४२॥

मन्त्र

यथा सिन्धुर्नदीनां साम्राज्यं सुषुवे वृषा ।

एवा त्वं सम्राज्ञ्येधि पत्युरस्तं परेत्य ॥४३॥

(यथा नदीनां) जैसे नदियों का (सिन्धु) समुद्र (साम्राज्यं सुषुवे) शासक है उसी प्रकार वृषा (पति) तुम्हारा शासक है (त्वं पत्युरस्तं) तू पति के घर में जाकर (सम्राज्ञी) महारानी(एधि)बन ॥४३॥

देख, बेटी ! तू अभी स्नान करके जाती है। इस प्रसंग में नदी सिन्धु समागम से कुछ उपदेश ग्रहण कर। नदी पति में नदियों का साम्राज्य है और वह साम्राज्य नदियों को प्रसन्नता पूर्वक देता है, परन्तु इस साम्राज्य की प्राप्ति के लिये नदियां भी अपने आप को समुद्र में अस्त कर देती है। बस इस तत्व को जानती हुई तू भी पति के घर में जाकर इस गृहस्थाश्रम रूपी समुद्र में रानी बन ॥४३॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यथा नदीर्नदा सर्वे सागरे यान्ति संस्थितिम् ।

तथैवाश्रमिणः सर्वे गृहस्थे यान्ति संस्थितिम् ॥४३॥

मन्त्र

सम्राज्येधि श्वशुरेषु सम्राज्युत देवृषु ।

ननान्दुः सम्राज्येधि सम्राज्युत श्वश्र्वाः ॥४४॥

श्वशुर देवर, ननद तथा सास इन सब में तू (सम्राज्ञी एधि) सम्राज्ञी बन इन में विशेष प्रकार से दीप्त होने वाली बन (राज़ दीप्तौ धातु पाठे ॥४४॥

श्वसुरों की रानी बन, देवरों, ननदों और सासों की रानी बन ।

मन्त्र

या अकृन्तन्नवयन् याश्च तत्निरे या देवीरन्तां अभितोऽददन्त ।

तास्त्वा जरसे सं व्ययन्त्वायुष्मतीदं परि धत्स्व वासः ॥४५॥

(आयुष्मति) हे आयुष्मति पुत्री (याः) जिन साड़ियों को (अकृन्तन)काते (अवयन) बने (तत्निरे) ताना ताने (अन्तान) अचरों को (अभितः) चारों ओर से (अददन्त) गांठ देकर बनाया (ता) उन साड़ियों को (त्वा) तुमको (जरसे) बुढ़ापे तक (सं व्यपन्तु) आच्छादित करें । (इदं वासः परिधत्स्व) इस कपड़े को धारण कर ॥४५॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये वस्त्र ले जा। इनको बनाने के लिये जिन्होंने ऊन अथवा खेती काटी, जिन्होंने तार काते, जिन्होंने ताना तना और जिन्होंने चारों ओर झालर किनारी लगाये वे बुढ़ापे तक तुझे पहिनाते रहें। बेटी! ले यह वस्त्र पहिन! क्या सुन्दर आशीर्वाद है। आशीर्वाद पाने वाले के साथ आशीर्वाद देने वाले को भी आशीर्वाद मिल गया ॥४५॥

मन्त्र

जीवं रुदन्ति वि नयन्त्यध्वरं दीर्घामनु प्रसितिं दीध्युर्नरः ।

वामं पितृभ्यो य इदं समीरिरे मयः पतिभ्यो जनये परिष्वजे।४६

(जीवं रुदन्ति) जीते ही रोते हैं (अध्वरं विनन्ति) यज्ञ में ले जाते हैं (दीर्घाम) लम्बे (प्रसिति) बन्धन को (दीध्युः) विचारते हैं। (यः) जो (इदं वामं) इस सुन्दर बात को (पितृभ्यः) माता पिता के लिये (समीरिरे) लाते हैं वह (मयः) सुख है क्योंकि (पतिभ्यः परिष्वजे) लड़की अब पति के भुज पाश में बंध रही है ॥४६॥

पुरोहित, कन्या के पिता को बधाई देते हुये कहता है कि यजमान मरे तो रोने का प्रसङ्ग होता ही है, परन्तु धन्य है वे जिन्हें जीवन में रोने के ये मधुर वियोग प्रसङ्ग आते हैं। जो अपनी संतान को इस योग्य बना कर कि उनके वियोग में रोना आवे, फिर उनको अपने हाथों से ही वियोगकारी यज्ञों में ले जाकर खड़ा करते हैं और बन्धनों में से छूटना तो दूर रहा, परन्तु जिन्हे लम्बे २ बन्धन बांधने की सूझते हैं। धन्य है वे प्रकृष्ट बन्धन जिनमें बंधने से मनुष्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने आप को धन्य मानता है। माता पिता के लिये वह एक विशेष प्रतीक्षित दिन होता है, जिस दिन पुरोहित आकर उन्हें कहता है कि मय अर्थात् बधाई हो। तुम्हारी जायी अर्थात् पैदा की हुई आज अपने पति के भुजपाश में विश्राम करने जा रही है। ॥४६॥

मन्त्र

स्योनं ध्रुवं प्रजायै धारयामि तेऽश्मानं देव्याः पृथिव्या उपस्थे।
तमा तिष्ठानुमाद्या सुवर्चा दीर्घं त आयुः सविता कृणोतु ।४७।

(देव्याः पृथिव्या), देवी पृथिवी की, (उपस्थे) गोद में (ते) तेरे लिये (ध्रुवं अश्मानं धारयामि) अचल पत्थर को स्थापित करता हूं, (स्योनं प्रजायै) सुखदायक प्रजा के लिये, (तमा अतिष्ठ) उस पर अच्छी प्रकार खड़ी हो, अनुमाद्य), प्रसन्न हो (सुवर्चाः) उत्तम तेज वाली है, (ते आयुः) तुम्हारी आयु सविता राजा या परमात्मा (दीर्घं कृणोतु), लम्बी करे ॥४७॥

मेरी बेटी ! मुझे आज इसलिये दुःख नहीं क्योंकि आज तू अल्हड़ (innocent) बालिका के पद को छोड़कर गृहणी के उत्तरदायित्व पूर्ण और गौरवान्वित अधिकार पद पर पैर रख रही है। यह तेरा अधिकार इस पृथिवी के गोद में तेरे लिये कल्याणकारी, अचल और प्रजा देने वाला हो। इस पर डट कर जम। खूब सुख भोग। कान्तिमती रह और भगवान सविता तुझे दीर्घायु करें। अधिकार की अविचलता का द्योतन करने के यहां एक शिला पर कन्या का पैर रखाया जाता है और सविता का नाम आने से यह स्पष्ट है कि पत्नी किसी व्यक्ति की क्रीत दासी नहीं, परन्तु राष्ट्र की ओर से माता के उच्च पद पर राष्ट्रीय अधिकारिणी है और उसके अधिकार चट्टान की तरह अचल हैं। उसका अपमान करने का अधिकार किसी को नहीं ॥४७॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्र

येनाग्निरस्या भूम्या हस्तं जग्राह दक्षिणम् ।
तेन गृह्णामि ते हस्तं मा व्यथिष्ठा मया सह प्रजया च धनेन च ॥
॥४८॥

(अस्या भूम्या) इस पृथिवी का (दक्षिणं हस्तं) दाहिना हाथ, अर्थात् समृद्ध करने का दायित्व, (दक्षवृद्धौ शीघ्रार्थे च जग्राह।) पकड़ा है, अग्निः सूर्यः (येन) जिस प्रयोजन से, (तेन) उसी समृद्धि के लिये (ते) तुम्हारे हाथ को ग्रहण करता हूँ, (मा व्यथिष्ठा) मत दुखी हो (मया सह) मेरे साथ (प्रजया धनेन च) प्रजा और धन के साथ बढ़ ॥४८॥

अब पाणिग्रहण प्रारम्भ होता है जिस प्रकार अग्नि अर्थात् सूर्य ने भूमि का दक्षिण हाथ पकड़ा है अर्थात् भूमि को शस्य समृद्ध करने का ठेका लिया है, उसी हाथ से मैं भी तेरा हाथ पकड़ता हूं । मेरे साथ रहकर तुझे किसी प्रकार का कष्ट न हो, न प्रजा का और न धन का ॥४८॥

मन्त्र

देवस्ते सविता हस्तं गृह्णातु सोमो राजा सुप्रजसं कृणोतु ।
अग्निः सुभगां जातवेदाः पत्ये पत्नीं जरदष्टिं कृणोतु ॥४६॥

सविता (सर्वोत्पादक) देव (ते) तुम्हारा (हस्तं गृह्णातु) हाथ पकड़े, (राजा सोम) सोम राजा, (सुप्रजसं) उत्तम प्रजा युक्त (कृणोतु) करे (जात वेदा अग्नि) जात वेद अग्नि (सुभगां) सौभाग्यवती (पत्नीं) पत्नी को (पत्ये) पति के लिये (जरदष्टिं कृणोतु) वृद्धावस्था तक निर्वाह करने के लिये (कृणोतु) करे ॥४६॥

हे देवि ! मैं किस लायक हूं। मैं तेरा हाथ क्या पकड़ूंगा ? मैं तो निमित्त मात्र हूँ। आज तेरा हाथ भगवान सविता ने पकड़ा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं तुझे सन्तान क्या दूंगा। सन्तान तुझे भगवान् सोम देंगे। मैं तुझे सौभाग्य क्या दूंगा। सौभाग्य तुझे जात वेदः अग्नि देगा। इन दिव्य शक्तियों की कृपा से तू आनन्द युक्त अपने पति के साथ बुढ़ापा भोग ॥४६॥

मन्त्र

गृह्णामि ते सौभागत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासः।
भगो अर्यमा सविता पुरंधिर्मह्यं त्वादुर्गार्हपत्याय देवाः ॥५०॥

(ते) तुम्हारे (सौभागत्वाय) सौभाग्य के लिये (हस्तं गृह्णामि) हाथ को पकड़ता हूँ, (मया पत्या) मुझ पति के साथ (यथासः) जिससे (जरदष्टिः) बुढ़ापे तक जीवित रहो,(भगः) ऐश्वर्यवान,(अर्यमा) न्यायाधीश (सविता) राजनियन्ता शासकगण, (पुरंधिः) नगरी के गण-मान्य लोग (देवाः) विद्वान लोग (त्वा) तुझको (गार्हपत्याय) गृहस्थ के लिये, (मह्यं अदुः), मुझे दिया है ॥५०॥

मैंने तेरा हाथ यह समझकर पकड़ा है कि इससे हमारे सौभाग्य की वृद्धि होगी। बुढ़ापे तक आनन्द युक्त रहेंगे। भाग्यशाली लोग यहां बैठे हैं। न्यायाधीश लोग यहां बैठे हैं। राजनियन्ता यहां बैठे हैं। नगरी के गौरव की रक्षक देवियां यहां बैठी हैं। इस सभा मण्डप में उपस्थित होकर इन सब देवों ने गार्हपत्य की रक्षा के लिये तुझे मेरे अर्पण किया है।

मन्त्र

भगस्ते हस्तमग्रहीत् सविता हस्तमग्रहीत।
पत्नी त्वमसि धर्मणाहं गृहपतिस्तव ॥५१॥

(ते हस्तं) तेरे हाथ को (भगः) ऐश्वर्य, (अग्रहीत्) ग्रहण करता है, (सविता) प्रेरक नियम हाथ पकड़ता है, (त्वं) तुम (धर्मणा) धर्म

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से मेरी पत्नी (पत्नीं असि) हो, (अहं) मैं (तव) तुम्हारा (गृहपतिः) घर का रक्षक हूं ॥५१॥

देवि ! सच जान । मैंने तेरा हाथ नहीं पकड़ा, पर मेरे सौभाग्य ने तेरा हाथ पकड़ा है, देव सविता ने तेरा हाथ पकड़ा है । तू धर्म के बल से न कि अर्थ या काम से मेरी पत्नी है । भला तुझे पाकर मैं तेरा क्यों न गृहपति कहलाऊं ॥५१॥

मन्त्र

ममेयमस्तु पोष्या मह्यं त्वादाद् बृहस्पतिः ।
मया पत्या प्रजावति सं जीव शरदःशतम् ॥५२॥

(इयम्) यह पत्नी (मम पोष्या) मेरे द्वारा पोषण करने योग्य है, (त्वा) तुझको (बृहस्पतिः) बड़े बड़े विद्वानों ने, (मह्यं) मुझे (अदात्) दिया है, हे प्रजावति ! (मया पत्या) मुझ पति के साथ संजीव (शरदः शतम्) सौ वर्ष तक जीवो ॥५२॥

मैं आज से प्रण करता हूं कि इस पत्नी का पोषण मेरा कर्तव्य होगा । मैंने अचानक या आंख मूंद कर इसे नहीं पाया है परन्तु बृहस्पति अर्थात् बड़ों के बड़े विद्वान ब्राह्मण ने तुझ हीरे को चुनकर मुझ पात्र में दान किया है । ए मेरे बच्चों की मां ! मुझ पति के साथ तू सौ वर्ष जीवित रह ॥५२॥

मन्त्र

त्वष्टा वासो व्यदधाच्छुभे कं बृहस्पतेः प्रशिषा कवीनाम् ।
तेनेमां नारीं सविता भगश्च सूर्यामिव परि धत्तां प्रजया ॥५३॥

(बृहस्पते) बड़े विद्वानों तथा (कवीनाम्) क्रान्तीदर्शी विद्वानों की (प्रशिषा) आज्ञा से (त्वष्टा) शिल्पी ने (शुभे) शोभा के लिये (वासो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यदधात्) वस्त्र बनाये हैं, (तेन) इस कारण से (इमां नारीं) इस स्त्री को, (सविता) राजा और (भगः) ऐश्वर्यशाली वैश्य लोग (सूर्यां) सूर्या के (इव) समान, (प्रजया परिधत्तां) प्रजा से युक्त करें ॥५३॥

अब वर पक्ष की तरफ से कन्या को वस्त्र दिया जाता है। उस समय कहा जाता है — अत्यन्त शोभा वर्धक वस्त्र को जिस प्रकार त्वष्टा ने सूर्या के लिये तैयार किया, उसी प्रकार बृहस्पति ने ब्राह्मण तथा अन्य विद्वानों की अनुमति से राजनियम का कर्तव्य है और राष्ट्र के सौभाग्य का तकाजा है कि इस नारी को अन्न वस्त्र और सन्तान समृद्धि से सदा ढक कर रखें। त्वष्टा व्यक्ति का देवता है क्यों कि सन्तान में व्यक्ति के व्यक्तित्व की पुनरावृत्ति होती है। इसलिये त्वष्टा को सन्तान का देवता माना गया है ॥५३॥

मन्त्र

इन्द्राग्नि द्यावापृथिवी मातरिश्वा मित्रावरुणा भगो अश्विनोभा।
बृहस्पतिर्मरुतो ब्रह्म सोम इमां नारीं प्रजया वर्धयन्तु ॥५४॥

(इन्द्राग्नि) राजा राज पुरोहित, (द्यावा पृथिवी) माता पिता, (मातरिश्व) गृहोचित व्यवहार (मित्रावरुणा) ब्राह्मण क्षत्रिय, (भगः) कुटुम्बसुख, (अश्विनौ) दोनों कुल के पुरोहित।

बृहस्पतिः ब्राह्मणों के नेता, (मरुतः) सैनिक लोग, (वेद) वेद पाठी, (सोम) वैद्य ये सब (इमां नारीं) इस स्त्री को (वर्धयन्तु) बढ़ावें ॥५४॥

इन्द्राग्नि अर्थात् राजा और राजपुरोहित द्यावा पृथिवी अर्थात् माता और पिता, मातरिश्वा अर्थात् गृहस्थ व्यवहार अथवा गृहस्थोचित आचार, मित्रावरुणा अर्थात् ब्राह्मण और क्षत्रिय भग अर्थात् कुटुम्बसुख, अश्विनौ अर्थात् दोनों कुलों के पुरोहित, ब्राह्मणों के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नेता सैनिक लोग, वेद तथा वैद्य अथवा गन्धर्व — ये सब देव इस नारी की प्रजावृद्धि में सहायक हों ॥५४॥

मन्त्र

बृहस्पतिः प्रथमः सूर्यायाः शीर्षे केशां अकल्पयत् ।
तेनेमामश्विना नारीं पत्ये सं शोभयामसि ॥५५॥

(बृहस्पतिः) बृहस्पति ने सूर्या के (शीर्षे) सिर पर (केशां) केशों को (अकल्पयत्) बनाया. तेन उसी प्रकार (इमां नारीं) इस स्त्री को हे अश्विना ! श्रृङ्गार विज्ञ पुरोहित (पत्ये) पति के लिये इसे (संशोभया-मसि) सुशोभित करो ॥५५॥

अब कन्या को वर पक्ष की तरफ से श्रृङ्गार की सामग्री दी जाती है। जब सूर्या पति लोक को चलती है तो सारे शरीर में रोमांच हो जाता है, मानो वृहस्पति ने सूर्या के केशों का श्रृंङ्गार कर दिया। वही देखने वालों के हृदय में रोमांच पैदा करने वाला दिव्य श्रृंङ्गार, हे पुरोहितो ! आज इस नारी को दीजिये। आज आपके सामने हम इसको उस श्रृंङ्गार से सजायें पति के निमित्त ॥५५॥

मन्त्र

इदं तद्रूपं यदवस्त योषा जायां जिज्ञासे मनसा चरन्तीम् ।
तामन्वर्तिष्ये सखिभिर्नवग्वैः क इमान् विद्वान् वि चचर्त पाशान् ॥

(इदं तद्रूपं) यह वह रूप है (यद) जिसको (योषा) नवोढा (अवस्त) धारण करती है, (चरन्ति जायां) आचरण करती हुई स्त्री को (मनसा) मैं मन से (जिज्ञासे) जानता हूं। मैं (सखिभिः नवग्वै) नवीन सखियों के साथ (तामन्वर्तिष्ये) उसका अनुगमन करूंगा, (कः विद्वान्) कौन विद्वान मेरे अतिरिक्त (इमान् पाशान्) इसके इस मोह बन्धन को (विचर्चत) काट सकता है ॥५६॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब वस्त्र परिधान तथा शृंगार करके कन्या बाहर आती है। उसे देखकर वर कहता है कि यही तो वह रूप है जिसे कुल वधू धारण करती आई है। मैं मन से अपनी पत्नी के मन की बात जानूंगा। इसे कभी अनुभव नहीं होने दूंगा। इसके इष्ट मित्र, बन्धु और सहेलियां छूट गईं। मैं नये मित्रों से इसका मन भर दूंगा। ऐसा न करूं तो कौन सहृदय है कि जो माता पिता के प्रेम पाश में लाड़ चाव से पाली पुत्री को छुड़ाने का साहस करे। टिप्पणी — नव वधू पति कुल में जाते हुए स्त्री स्वभाव सुलभ मधुर लज्जा से परवश होकर निःसंकोच अपनी बात नहीं कह सकती। पग पग पर सकुचाती है, ऐसे समय पति कुल वालों का कर्तव्य है कि स्वयं प्रयत्न करके उसकी मन की बात जानें और उसके मनोरथों की पूर्ति करें ॥५६॥

मन्त्र

अहं वि ष्यामि मयि रूपमस्या वेददित् पश्यन् मनसः कुलायम्।
न स्तेयमद्मि मनसोदमुच्ये स्वयं श्रथ्नानो वरुणस्य पाशान् ५७

(अहं) मैं, (अस्या रूपं) इसके रूप को, (पश्यन्) देखता हुआ, (मयि) अपने में (मनसः कुलायम्) मन के घोंसले को (विष्यामि) विचारता हूं, (मैं) इससे (स्तेयमद्मि) चोरी कर नहीं खाता हूँ, (स्वयं) अपने आप (वरुणस्य) पुलिस के पाशान् बन्धन को (श्रथ्नानो) शिथिल करता हुआ, (मनसा उद् अमुच्ये) मन से छुड़ाता हूँ ॥५७॥

यह छूट गई तो क्या हुआ ? मैं जो बन्धन में बन्ध गया और यह भी क्या छूटेगी, इस प्रतिमा को मैंने अपने हृदय में कैद कर लिया। इस मन के घोंसले में विश्राम करने के आनन्द को कोई तत्वदर्शी ही जानता है। न मैं इसकी चीज चुरा सकता हूं और न यह मेरी। भला हमारे बीच में वरुण दखल दे तो कैसे ? वह चोरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के अपराध में किसी को पकड़े तो कैसे ? मैंने स्वयं ही तो यह घोषणा कर दी है कि मेरा कुछ नहीं। मेरा जो कुछ है वह इसका है। क्या यह कहकर मैंने वरुण के पाश नहीं काट डाले। आज मैं इन पाशों को काट कर ऐसा अनुभव कर रहा हूँ मानो यह सारी सम्पत्ति मुझ पर बोझ थी। आज सम्भालने वाली आ गई तो बोझ से छूटा।५७।

मन्त्र

प्र त्वा मुञ्चामि वरुणस्य पाशाद येन त्वाबध्नात् सविता सुशेवाः
उरु लोकं सुगमत्र पन्थां कृणोमि तुभ्यं सहपन्त्यै वधु ॥५८॥

हे वधु (येन) जिस (वरुणस्य पाशाद्) वरुण के पाश से (सुशेवाः सविता) सुखदायक राजा (त्वा अवध्नात्) तुझे बांधा था, उससे (त्वा) तुझको (प्रमुञ्चामि) छुड़ाता हूं। (तुभ्य सहपत्न्यै) तुझ सह धर्मिणी के लिये, (उरुं) लोक, विस्तृत कार्य क्षेत्र और उसका (पन्थां) रास्ता (सुगमत्र) सुगम (कृणोमि) करता हूं ॥५८॥

वर वधू से कहता है कि हे देवि ! अब तक कुमारी होने के कारण सविता देव ने अनेक राजनियमों से बाँध रखा था, जिनके भग्न करने पर तू वरुण के पाश में बंध सकती थी। आज से मैंने तुम्हें उन सब बन्धनों से आजाद किया। अब तुम्हारे लिये उरु लोक अर्थात् विशाल कार्य क्षेत्र है और मैंने सब प्रकार की स्वतन्त्रता देकर हे वधू ! केवल तुम्हारा ही रास्ता सुगम नहीं कर दिया, परन्तु हे सह धर्मिणी ! मैंने अपना भी रास्ता सुगम कर दिया है। इस मन्त्र से पता लगता है कि राजा को कुमारियों के कौमार की बड़ी कड़ाई से रक्षा करनी चाहिये क्योंकि वे राष्ट्र की अमूल्यतम सम्पत्तियों में से हैं। विवाह होने के पश्चात् रास्ता सुगम होने की बात भी स्पष्ट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, अब भी अनेक स्थानों पर अविवाहितों को किराये पर मकानादि नहीं मिलते पर विवाहितों को झट मिल जाते हैं ।।५८।।

मन्त्र

उद्यच्छध्वमप रक्षो हनाथेमां नारीं सुकृते दधात ।
धाता विपश्चित् पतिमस्यै विवेद भगो राजा पुर एतु प्रजानन् ५९

(उद् यच्छध्वम) शस्त्र उठाओ (रक्षः) राक्षसों को (अप हनाथ) मार भगाओ । (इमां नारी) इस स्त्री की (सुकृते) अच्छे कार्य के लिये (दधातन) धारण कराओ । (धाता विपश्चित्) पिता इसके (पतिम्) पति को जानता है (प्रजानन् भगो राजा) ज्ञान युक्त ऐश्वर्य (पुर एतु) आगे हमें प्राप्त होवें ।।५९।।

इस मन्त्र में वर अपने साथियों से कहता है कि अब तक इस देवी की राक्षसों से रक्षा का भार मुख्य रूप से पिता और राजा पर था । अब यह भार हम पर डाल कर राजा तो निश्चिन्त हो रहा है । मेरे भाइयो ! आज मैंने इसका पाणिग्रहण किया है और आपने मेरी बांह पकड़ी है, इसलिये आज से तुम इसकी रक्षा के लिये उद्योग करो । आज से तुम राक्षसों का ताड़न करो परन्तु एक बात का ध्यान रखो कि इस नारी की रक्षा का सबसे उत्तम उपाय यह है कि अपने कुल की धार्मिक सम्पत्ति की रक्षा का अधिकार इसके हाथ में दे दो जिससे यह सुकर्म में लगी रहे । देखो मनु—

न कश्चिदयोषितः शक्तः प्रसह्य परिरक्षितुम् ।
एतेरुपायैर्योगैस्तु शक्यास्ताः परिरक्षितुम् ।।
अर्थस्य संग्रहे चैनां व्यये चैव नियोजयेत् ।
शौचेद्धर्मेऽन्नपत्याञ्च पर्यणाह्यस्य वेक्षणे ।।

विद्वान् धाता संरक्षक विपश्चित् ने जांच पड़ताल के पश्चात् इसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पति ढूंढ कर दिया है। यह मेरा सौभाग्य है। यह पदवी मुझे मिली है। प्रभु ऐसी कृपा करें कि अब मैं जहां जहां जाऊं वहां ज्ञान युक्त सौभाग्य मेरे आगे आगे चले ॥५६॥

मन्त्र

भगस्ततक्ष चतुरः पादान् भगस्ततक्ष चत्वार्युष्पलानि ।
त्वष्टा पिपेश मध्यतोऽनु वर्ध्रान्त्सा नो अस्तु सुमङ्गली ॥६०॥

इस पलंग के (चतुर पादान्) चारों पावों को (भगः) ऐश्वर्य ने (ततक्ष) बनाया है, (चत्वारि उष्पलानि भगः ततक्ष) और चारों डण्डे मानों भग के ही बने हैं, (मध्यतो) बीच के (वर्ध्रान्) रस्सियों को त्वष्टा शिल्पी ने (पिपेश) बनाया है, (सा) वह खाट (नः) हमारे लिये (सुमङ्गली) मंगलमयी हो ।६०।

अब वर वधू को विदाई के लिये एक पलंग पर बैठाते हैं। उस समय पुरोहित कहता है हे वर वधू ! जिस पलंग पर तुम बैठे हो इसके चारों पावे भी सौभाग्य के बने हैं तथा चारों उष्पलानी अर्थात् बाही भी सौभाग्य ने बनाये हैं। बीच में जो निवार बुनी गई है वह त्वष्टा की बनाई हुई है। यह शय्या तुम्हारे लिये अतिमंगल हो ॥६०॥

मन्त्र

सुकिंशुकं वहतुं विश्वरूपं हिरण्यवर्णं सुवृतं सुचक्रम् ।
आरोह सूर्ये अमृतस्य लोकं स्योनं पतिभ्यो वहतुं कृणु त्वम् ६१

(सुकिंशुकं) अच्छे बेल बूटे वाली (हिरण्यवर्णं) सुवर्णमयी (विश्व रूपं) अनेक रूप वाली तथा (सुचक्रम्) अच्छे चक्कों से (सुवृत) बनी (वहतुं) रथ पर (आरोह) चढ़ तेरा रथ पर चढ़ना (अमृतस्यलोकं) गृहस्थाश्रम के सिंहासन पर चढ़ने के समान हो, (त्वं पतिभ्यः) पति तथा देवरादि के लिये (स्योनं) सुखदायिनी हो ॥६१॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब वधू जन्यावास पर जाने के लिये रथ पर बैठती है, उस समय पुरोहित कहता है कि हे गृहस्थलोक की सूर्या ! सुकिंशुक अर्थात् बेल बूटेदार, हृदयग्राही रूप वाले, जाज्वल्यमान्, खूबसूरती से मढ़े हुए उत्तम चक्रों वाले इस रथ पर अब तू चढ़ जा और यह तेरा रथ पर चढ़ना अमृतलोक अर्थात् गृहस्थाश्रम के सिंहासन पर चढ़ने के समान हो। तेरा सारा सार्थ तेरे रखवालों के लिये मंगलकारी हो अथवा पतिकुल वालों के लिये मंगलकारी हो ॥६१॥

मन्त्र

अभ्रातृघ्नीं वरुणापशुघ्नीं बृहस्पते ।
इन्द्रापतिघ्नीं पुत्रिणीमास्मभ्यं सवितर्वह ॥६२॥

हे बृहस्पते, हे इन्द्र, हे वरुण, हे सविता, राजन् (अभ्रातृघ्नी) भाई का नाश करने वाली, पुत्रों की रक्षा करने वाली, पति की सेवा करने वाली, (पुत्रीणीम्) सन्तान युक्त करा कर (अस्मभ्यं) यह हमारे लिये सुप्राप्त कराइये ॥६२॥

मन्त्र

मा हिंसिष्टं कुमार्यं स्थूणे देव कृते पथि ।
शालाया देव्या द्वारं स्योनं कृण्मो वधूपथम् ॥६३॥

(देव कृते पथि) विद्वानों द्वारा बनाये हुये रास्ते, (देव्या शालायां द्वारं) दिव्य गुण युक्त शाला के द्वार को (वधू पथ) और वधू के मार्ग को (स्योन) सुखदायक, कृष्मः करते हैं। (कुमार्य मा हिंसिष्ट) कुमारी की हिंसा न करें ॥६३॥

हे वरुण ! देखना इससे भाईयों को हानि न पहुंचे। हे बृहस्पते ! देखना उससे सन्तान को हानि न पहुँचे। हे वरुण ! तुमने यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रमाणित किया है कि इससे भाईयों की हानि नही पहुँच सकती। हे बृहस्पते! तुम्हारी शिक्षा का फल है कि इससे सन्तान को हानि नही पहुँचेगी। हे इन्द्र! यजमान् अर्थात् वर का पिता! तुम्हारा व्यवहार इस बात का साक्षी है कि यह पति की प्यारी होगी। हे सविता! तुम्हारे प्रताप से यह पुत्रवती होगी। आप सब लोग इसे कुशल पूर्वक घर पहुँचावें। यहां सविता का नाम आने पर स्पष्ट है कि बरात को कुशल पूर्वक घर पहुंचाना राजा के विशेष कर्तव्यों में से है और इसके लिये विशेष सुविधाजनक राजनियम होने चाहियें ॥६२॥

अब जन्यावास के द्वार पर जो तोरण बना हुआ है (arch of honor)। वहां वधू का स्वागत होता है। उस तोरण पर विद्वानों के बनाये हुए मार्ग पर खड़े हुए ये दो द्वारस्तम्भ इस कुमारी के लिये मंगलकारी हों। हमने वधू के स्वागत का सारा मार्ग खूब सजाया है विशेषकर शाला का द्वार ॥६३॥

मन्त्र

ब्रह्मापरं युज्यतां ब्रह्म पूर्वं ब्रह्मान्ततो मध्यतो ब्रह्म सर्वतः।
अनाव्याधां देवपुरां प्रपद्य शिवा स्योना पतिलोके वि राज ॥६४॥

हे कन्ये (ब्रह्म) ईश्वर (अपरं) बाद में ही (ब्रह्म पूर्वं) ईश्वर पहले ही (ब्रह्म अन्ततः) ब्रह्म अन्त में ही (मध्यतः ब्रह्म) बीच में ब्रह्म (सर्वतः ब्रह्म) सब स्थान पर ब्रह्म हो, (अनाव्याधां देवपुरां) रोग रहित देवपुरी को प्राप्त हुई है, (शिवास्योना) (कल्याणकारिणी) सुखकारिणी (पतिलोके) पति के घर शोभित हो ॥६४॥

वर पुरोहित की ओर से कन्या को स्वागत वचन और आशीर्वचन—हे पुत्री! आज तू इस विघ्नबाधा रहित देवपुरी में आई है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेरे आगे, पीछे, अन्त, मध्य चारों ओर प्रभु प्रेम का कवच हो। यह कवच पहिन कर मंगलमयी होकर सजी धजी पति लोक में विराज ॥६४॥

इति प्रथमोऽनुवाक
प्रथमः सूक्तश्च समाप्तः

द्वितीयो अनुवाकः

मन्त्र

तुभ्यमग्रे पर्यवहन्त्सूर्यां वहतुना सह ।
स नः पतिभ्यो जायां दा अग्ने प्रजया सह ॥१॥

हे (अग्ने) व्रताग्ने (तुभ्यमग्रे) तुम्हारे समक्ष (वहतुना सह) दहेज और रथ के साथ (सूर्यां) कन्या को (परि अवहन) परिणयन करते हैं (सः) वह तू (न पतिभ्य) हम पतियों को (प्रजया सह) प्रजा के साथ (जायां) स्त्री को (दाः) दो अर्थात् प्रजा से युक्त करो ॥१॥

अब जनवासे की अग्निशाला में वधू अग्नि साक्षिक स्वागत होता है।

हे व्रतरूप अग्ने ! अपने सम्पूर्ण सार्थ के साथ आध्यात्मिक क्षेत्र में सूर्या को तेरे निमित्त ही पतिलोक तक ले जाते रहे हैं और स्थूल जगत में भी तू ही पति को जाया और दम्पति को सन्तान देने वाला है। व्रतहीन को कोई कन्या क्यों देगा और व्रतहीन सन्तान की कामना क्यों करें ? व्रती पुरुष को तो व्रत को सम्पूर्ण करने के लिये सन्तान कामना करनी चाहिये, व्रतहीन को नहीं ॥१॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्र

पुनः पत्नीमग्निरदादायुषा सह वर्चसा ।
दीर्घायुरस्या यः पतिर्जीवाति शरदः शतम् ॥२॥

(पुनः) फिर से (अग्निः) व्रताग्नि (आयुषा सह वर्चसा) आयु और तेज के साथ, (अदात्) दिया (यः) जो (अस्या पतिः) जो इसका पति है वह (शरदः शतम) सौ वर्ष तक (जीवाति) जीता है ॥२॥

"पुनः"— नाना योनियों के भोगने के पश्चात आज फिर मनुष्य जन्म पाया है और फिर इस गृहस्थाश्रम में प्रवेश के समय व्रत रूप अग्नि की कृपा से मैं इस योग्य हुआ हूं कि इस पत्नी का पाणिग्रहण करूं। मैं इस कन्या का मनसा वरण कर चुका था पर मेरा यह वरण मर्यादानुकूल नहीं समझा जाता था। आज समस्त विद्वन्मण्डली के बीच जब हमारी प्रतिज्ञा पर विद्वान ब्राह्मणों ने अग्नि साक्षिक मोहर लगाई है, तब यह पिता की दी हुई कन्या, वास्तव में दी हुई समझी गई है। वह पहला दान मानसिक दान था। आज अग्नि की कृपा से फिर यह प्रत्यक्ष दान हुआ है।

यह पत्नी मेरे घर क्या आई है। आयु और कान्ति साथ लेकर आई है। भला जो इसका पति होगा वह १०० वर्ष क्यों नहीं जीयेगा ॥२॥

मन्त्र

सोमस्य जाया प्रथमं गन्धर्वस्तेऽपरः पतिः ।
तृतीयो अग्निष्टे पतिरस्तुरीयस्ते मनुष्यजाः ॥३॥

(प्रथमं) पहले (सोमस्य) की पत्नी (अपर) दूसरे (गन्धर्वः) गन्धर्व पति (ते) तुम्हारा (तृतीया) तीसरे नम्बर पर (अग्निः) दीक्षाग्नि में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीक्षित (तुरीयः) चौथे नम्बर पर (मनुष्यजाः) साधारण कुल जन्म की ओर ध्यान दिया जायेगा ॥३॥

योग्य पत्नी को पाना कोई सुगम बात नहीं है। मनुष्य देह धारण कर लेने मात्र से योग्य पत्नी नहीं मिलती। योग्य पत्नी का पति बनने के लिये पहले सोम अर्थात् स्नातक बनना पड़ता है, फिर व्यायाम और ललित कलाओं के अभ्यास से गन्धर्व अर्थात् सुन्दर बनना पड़ता है। "युवानः शोभनाः गन्धर्वाः" शतपथ १३. ४. ३. ७। इसके पश्चात् विधिपूर्वक अग्नि दीक्षा लेनी होती है। फिर यह किस कुल में उत्पन्न हुआ है। इस बात की पूछ तो चौथे नम्बर पर होती है ॥३॥

मन्त्र

सोमो ददद् गन्धर्वाय गन्धर्वो दददग्नये ।

रयिं च पुत्रांश्चादादग्निर्मह्यमथो इमाम् ॥४॥

(सोमः) सोम कन्या को (गन्धर्वाय ददद्) गन्धर्व के हाथ प्रदान करता है। (गन्धर्वः) गन्धर्व (अग्नेय ददद्) उसे अग्नि के हाथ प्रदान करता है। (अग्नि) फिर अग्नि (रयिम्) वीर्य य रज और पुत्रों को (ददद्) प्रदान करता हुआ (इमाम) इस कन्या को (मह्यम् अदाद्) मुझ पति को प्रदान करता है ॥४॥

इधर कन्या की शिक्षा में भी अग्नि की ही प्रधानता है। कन्या की शिक्षा के लिये किसी योग्य विद्वान् सोम को अर्पण कीजिये। उसके पश्चात गन्धर्व ने उसे ललित कलाओं में दीक्षित किया। फिर विद्वान ने पुरोहित ने उसे अग्नि दीक्षा दी। अग्नि दीक्षा के बाद सवर्ण्य होने पर मैं निश्चय कर सका कि उसका और मेरा व्रत एक है। इस व्रत के बिना न तो उसकी शिक्षा ही किसी काम की हुई न ललित कलाओं की चातुरी। इस व्रत रूप अग्नि के बल से ही वह मेरी धर्मपत्नी हुई। इसलिये कहना ही पड़ेगा कि मेरे घर में लक्ष्मी सन्तान किंबहुना दोनों की खान इस धर्मिणी को अग्नि ने ही मुझे दिया है ॥४॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्र

आ वामगन्त्सुमतिर्वाजिनीवसू न्यश्विना हृत्सु कामा अरंसत ।
अभूतं गोपा मिथु नाशुभस्पती प्रिया आर्यम्णो दुर्यां अशीमहि॥५॥

आज (आवाम्) तुम दोनों पति पत्नी को (सुमतिः आगमन्) सुमति प्राप्त हुई है, हे अश्विना! कुल पुरोहितो हमारे हृदयों में (कामा अरंसत) शुभ कामनायें क्रीड़ा कर रही हैं, (शुभः पता) शोभा की पालक (गोपा) गायों का पालक बनो (अर्यमाः) न्यायकारी परमात्मा की कृपा से (दुर्यां) गृहों की (प्रियाः) प्रिय होकर (अशीमहि) भोग करें ॥५॥

५, ६ मन्त्र में पुरोहित लोग दम्पति को कहते हैं। हे जवानी के राज्य में बसने वालो! प्रभु की कृपा से तुम्हें यह सुमति आई है जो तुमने गृहस्थाश्रम में प्रवेश का निश्चय किया है। अब दम्पति पुरोहितों से कहते हैं — हे अश्विनौ! तुम्हारी कृपा से आज हमारे हृदयों में उमंगों की भीड़ लगी है। अब फिर पुरोहित कहते हैं — हे शुभ कामनाओं के धनी! तुम दोनों की जोड़ी ने आज सुमति रूपी गौ पायी है। इस विधि की भली प्रकार रक्षा करो। तुम आज से गोपाल हुए। दम्पति कहते हैं — हे अश्विनौ! आपकी कृपा से हम उस हिसाब करने वाले ठीक माप तौल कर कर्मों का फल देने वाले अर्यमा के घर में उसके प्रेम पात्र बन कर पहुँचे। इस मन्त्र में गोपा और सुमति का परस्पर सम्बन्ध समझने के लिये यजुर्वेद के के १७वें अध्याय का ७४वां मन्त्र सहायक है।

ताँ सवितुर्वरेण्यस्य चित्रामाहं वृणे सुमतिं विश्वजन्याम्।
यामस्य कण्वोऽअदुहत्प्रपीनाँ सहस्रधारां पयसा महीं गाम ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्र

सा मन्दसाना मनसा शिवेन रयिं धेहि सर्ववीरं वचस्यम् ।
सुगं तीर्थं सुप्रपाणं शुभस्पती स्थाणुं पथिष्ठामप दुर्मतिं हतम्॥६॥

दोनों कुल के पुरोहित वर वधू से कहते हैं कि हे नव दम्पति ! (सा) यह उभरती हुई जवानी में मस्त तुम दोनों की युगल जोड़ी जिस प्रकार विवाह से पूर्व जब तुम दोनों स्नातक और स्नातिका बनने वाले थे, उस समय अपने २ गुरुकुलों के आचार्यों के द्वारा एक दूसरे के गुणों का श्रवण कर परस्पर एक दूसरे के गुणों से रीझ कर ही अपने हृदय में दूसरे के गुण की प्रशंसा करके तुम दोनों ने स्वयंवर विवाह किया, वह एक दूसरे के गुण पर मुग्ध होने का स्वभाव जो विवाह से पूर्व था या विवाह के कुछ दिन बाद तक रहता है, और कुछ दिनों के उपरान्त समाप्त हो जाता है सो ऐसा नहीं होना चाहिये। क्योंकि तुम्हारी जोड़ी साधारण नहीं है किन्तु (मन्दसाना) है जब तक गृहस्थाश्रम में रहो एक दूसरे के गुण का कीर्तन करने वाली, गुणानुवाद करने वाली परस्पर में गुण की स्तुति करने वाली हो। किन्तु तुम्हारा वह परस्पर का गुणकीर्तन भाटों के तुल्य केवल वाग्विलास मात्र ही न हो परन्तु गति करने वाला भी हो वह गति भी ज्ञान गमन प्राप्ति से सुयुक्त होनी चाहिये। भला वह ज्ञान किस काम का जिसमें गति न हो और वह गति किस काम की जिसमें से कुछ प्राप्ति न हो, ज्ञान गमन की सफलता तो है ही, इसी में उससे स्व अभीष्ट की प्राप्ति हो। बिना अभीष्ट सिद्धि के (ज्ञान ज्ञान के लिये है) यह कथन वैसा ही है जैसा विलासियों का यह कथन कि " कला कला के लिये है "। तुम्हारी जोड़ी मन्दसाना है एक दूसरे के अभीष्ट को मिलकर सिद्ध करने वाली है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि-स्तुति मोद स्वप्न कान्ति गतिषु धातु पाठ, यह जोड़ी कामनाओं के अनेकों सागर लिये हुये है, किन्तु कैसी कामनाओं वाली (मनसा शिवेन) शिव संकल्प युक्त मनसे जो इच्छा तरङ्ग उत्पन्न होती हैं ऐसी कामना वाली है और इसी शिव संकल्प की भावना के बल से ही (सर्व वीरं वचस्यम्) सर्वत्र प्रशंसनीय वीर पुत्र रूपी (रयिंधेहि) धन को धारण करो प्राप्त करो क्योंकि वह तुम्हारा शिव संकल्प युक्त मन ज्योतिषां ज्योतिः है। तुम्हारी सन्तान रयि है अर्थात् राष्ट्र के कल्याण के लिये अर्पित की गई हो, वह अपने व्यक्तिगत सुख के लिये नहीं अपितु राष्ट्र के सुख के लिये हो, राष्ट्र के सुख में ही अपना व्यक्तिगत सुख भी निहित है। वास्तविकता तो यही है कि यदि तुम्हारी वह सन्तान जो प्रजा के कल्याण के लिये राष्ट्र को दी गई है उसी का नाम रयि है (रा दाने धातु पाठे) और वही सन्तान (वचस्यम) सर्वत्र प्रशंसनीय होती है। जो भोग परायण इन्द्रियों की गुलामी करने वाली होगी उसकी प्रशंसा कौन करेगा। इस लिये हे (शुभस्पती) शुभ कामनाओं के प्रति पालक ! अपने अथक पुरुषार्थ के द्वारा उद्देश्य की प्राप्ति करने वाले ! तुम अपने इस गृहस्थ नव जीवन में अच्छे २ कार्यों का सम्पादन करते हुये। (सुगं तीर्थं) साधारण प्रजा के अज्ञान को नष्ट करने के लिये सर्व साधारण मनुष्यों को भी सुविद्वानों का सत्संग सुलभ हो सके इस हेतु सत्संग भवनों का निर्माण कराते रहना जहां पर विद्वान लोग ठहर कर प्रजा को ज्ञानोपदेश दें क्योंकि सच्चे तीर्थ तो यही हैं (तरन्ति येन तत्तीर्थं) जिस से अज्ञान दुःख पार हो जाये वही तीर्थ है। और (सुप्रयाणं) जो पथिक सत्संग में या अन्य स्थान पर जा रहे हों तो उन्हें मार्ग में प्यास भी लगती है उन्हें प्यास से कहीं कष्ट न हो जाये इस लिये सुन्दर पेय जलों से युक्त प्याऊ तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धूप में चलने के कारण मस्तिष्क पर बुरा प्रभाव पड़ता है अतः उस मस्तिष्क की हानिकारक धूप को नष्ट करने वाले (दुर्मतिहतम् पथिष्ठां स्थाणुम्)धूप से बचने के लिये छायादार वृक्षों का आरोपण करवाते रहना। इन शोभन कार्यों के द्वारा ही तुम्हारी जोड़ी सच्चे रूप में मन्दसाना कही जा सकती है। गुणानुरूप मेल का लाभ भी तो यही है कि जहां वे स्वयं सुखी रहें वहां अच्छे कार्यों को भी करें स्वयंवर की सफलता इसी में है। पाश्चात्य तथा वैदिक विवाह पद्धति में मौलिक भेद यह है कि पाश्चात्य विवाह नेत्र से होता है अर्थात् वर वधू एक दूसरे के रूप को देख कर रूप पर मोहित होकर करते हैं जिसका परिणाम यह होता है कि रूप के समाप्त होने या कम होने पर पति पत्नि पृथक हो जाते हैं। किन्तु वैदिक विवाह श्रोत्र से होता है अर्थात् पुरोहित अथवा गुरुकुल के आचार्य द्वारा एक दूसरे के गुण के यश श्रवण के पश्चात् गुणानुराग द्वारा यश पर रीझ कर ही वर वधू आपस में यावज्जीवन बंधे रहते हैं। इसी लिये मन्त्र में मन्दसाना शब्द का प्रयोग किया गया है।६॥

मन्त्र

या ओषधयो या नद्यो३यानि क्षेत्राणि या वना।

तास्त्वा वधु प्रजावतीं पत्ये रक्षन्तु रक्षसः॥७॥

हे नव दम्पति! इस राष्ट्र के अन्दर (या ओषधयः) जो भी खाद्य पदार्थ जड़ी बूटियां क्षीण शक्ति को पूर्ण करने आरण्य ओषधियां (या नद्यो ३) जो सजल सतत शीतल जल वाहिनी नदियां हैं (यानि क्षेत्राणि) जो निवास के लिये तथा कृषि के लिये भूमि है (क्षि निवासे धातु पाठे) (या वना) जो जंगल हैं जिनसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जलाने के लिये तथा मकान बनाने के लिये लकड़ियां प्राप्त होती हैं ये सभी वस्तुयें तुम्हारी ही तो हैं इनमें से किसी भी वस्तु की कमी तुम्हें नहीं होगी क्योंकि (प्रजावती वाम्) उत्तम प्रजा से युक्त बनने वाले तुम दोनों को सब प्रकार की सुविधा प्रदान की जायेगी। क्योंकि तुम दोनों तो केवल अपने सुख के लिये गृहस्थाश्रम में प्रविष्ट नहीं हो रहे हो। तुम तो राष्ट्र को उत्तम सन्तान प्रदान करने के लिये इस ओर कदम बढ़ा रहे हो जिस से राष्ट्रपति बहु प्रजा वाला बने। जब तुम्हारी सर्वस्व सर्वाधिक प्रिय सन्तान राष्ट्र के लिये है तो राष्ट्र भी तो तुम्हारे लिये है और राष्ट्र तुम्हारे लिये हो भी क्यों नहीं क्योंकि तुम्हारे ही कारण तो राष्ट्र नायक बहु प्रजा का आनन्द लेता है राष्ट्र के प्रजा रूपी अभाव को दूर भगाने में तुम्ही सर्वथा समर्थ हो। अतः इस (रक्षसः) सन्तानाभाव रूपी विघ्नकारी राक्षस से उस राष्ट्र नायक (पत्ये) राष्ट्र की रक्षा करने वाले की तुम (रक्षन्तु) अपनी सुयोग्य सन्तान से रक्षा करो ॥७॥

मन्त्र

एमं पन्थामरुक्षाम सुगं स्वस्तिवाहनम् ।

यस्मिन् वीरो न रिष्यत्यन्येषां विन्दते वसु ॥८॥

अब नव दम्पति पुरोहितों से कहते हैं कि हे आदरणीय पुरोहितो ! आपने अपनी अगाध विद्या और अनुभवों के द्वारा जिस (सुगं स्वस्ति वाहनं) जिस रास्ते पर हम खेलते हुये बिना किसी कष्ट के चलते चले जायें तथा वह अन्त में हमारा कल्याण करने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाला भी है ऐसे उस कल्याण के वहन करने वाले (पन्थां) मार्ग का निर्देश आपने कृपा कर हमें दिया। हम आपको वचन देते हैं कि आपके द्वारा निर्दिष्ट मार्ग पर ही (एमं अरुक्षाम) अवश्य आरूढ़ होंगे उसी पर चलेंगे क्योंकि हमें आपके एक एक वाक्य पर विश्वास है वह हमारे ब्रह्म वाक्य है। आपके निर्दिष्ट मार्ग पर चलने से ही हमें (अन्येषां विन्दते वसु) अन्यों से अधिक धन मान की उपलब्धि होगी, वह आप का निर्दिष्ट मार्ग तो ऐसा साफ और निष्कंटक है कि हम तो क्या हमारी प्रजा भी उस पर चलने से (नरिष्यति) थोड़ा ही क्लेश पायेगी। इसके लिये हम आप के आभारी हैं। हे पुरोहित जी ! ऊपर से नीचे गिरना सरल है किन्तु नीचे से ऊपर चढ़ना कठिन है किन्तु हमने तो आपकी कृपा से कल्याणकारी मार्ग को प्राप्त कर लिया है अतः (अरुक्षाम) आगे चढ़ते ही चले जायेंगे। ऐसे ही उचित मार्गों का निर्देश प्राप्त करने के लिये तो हमने आप जैसे सुयोग्य को पुरोहित चुना है ॥८॥

मन्त्र

इदं सु मे नरः शृणुत ययाशिषा दंपती वाममश्नुतः ।
ये गन्धर्वा अप्सरसश्च देवीरेषु वानस्पत्येषु येऽधि तस्थुः ।
स्योनास्ते अस्यै वध्वै भवन्तु मा हिंसिषुर्वहतुमुह्यमानम् ॥९॥

अब पुरोहित कहते हैं कि हे गृहस्थाश्रम को (नरः) ढोकर आगे ले चलने वाले (दंपती) वर वधू (इदं ये सुश्रृणुत) मेरी यह बात कान खोल कर सुन लो (यदाशिषा) जिन सुन्दर विचारों से ओत प्रोत होकर तुमने इस आश्रम में प्रवेश किया है तथा (वामम् अश्नुतः) श्रेष्ठ परिश्रम से उपार्जित धन के उपभोग का निश्चय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया है, तुम्हें इसमें किसी प्रकार की भय शंका नहीं करनी चाहिये क्योंकि (ये गन्धर्वा) जो सुन्दर वाणी को धारण करने वाले वाणा ही जिनका बल है वे मधुर भाषी उत्तम ज्ञानों की वर्षा करने वाले ज्ञानी तथा (देवीः अप्सरसः) दिव्य ज्ञान प्रदातृ स्त्रियां एवं (एषु वानस्पत्येषु अधितस्थुः) जो वानप्रस्थ आश्रम सेवी लोग हैं वे सभी तुम्हारे इस उत्तम कार्य का अनुमोदन कर रहे हैं, क्यों योग्य उत्तराधिकारी की कामना तो सभी करते हैं इस लिये वे तो (वहतु मुह्यमानम्) शुभ संकल्पों के रथ को ढोने वाले (अस्यैवध्वैः) इस नव वधू के लिये दुःख देना तो दूर रहा वे तो (स्योनाः भवन्तु) सुख देने वाले हैं। उन्हें तो यह जानकर प्रसन्नता है कि गृहस्थ के जिन भारों को छोड़ कर हम यहां चले आये हैं उसको ढोने के लिये अब दूसरे योग्य लोग आ गये हैं ॥९॥

मन्त्र

ये वध्वश्चन्द्रं वहतुं यक्ष्मा यन्ति जनां अनु ।

पुनस्तान् यज्ञिया देवा नयन्तु यत आगताः ॥१०॥

वर पक्ष का पुरोहित वधू से कहता है कि हे वधू ! जो तेरे मन में (चन्द्रं) आह्लादकारी (चदि आह्लादने धातुपाठे) दिव्य भावनायें हैं जो (वहतुं) तुम को पिता के घर से पति के घर तक ढोकर ले जाती हैं जिन के कारण ही तुम गतिशील हो उस आह्लाद कारी भाव को दबाने के लिये (जनान् अनु) सर्व साधारण मनुष्यों के व्यवहार को देख कर वैसा ही करने के (यक्ष्मा यन्ति) जो दूषित निम्न यक्ष्मा रोग के समान विचार तुम्हारे मन के अन्दर (यन्ति) आवें उन दुर्भावों को (यज्ञिया देवाः) पति के साथ संगठित हो कर कार्य करने की उत्तम भावनायें फिर दबोच लेवें वे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुष्ट भाव (यत आगताः) जहां से जिन कारणों से उठे थे आये थे, वे वहीं चले जावें। तुम्हारे अच्छे विचार उनको वहीं (नयन्तु) ले जावें। उनका पुनरागमन तुम्हारे मन में न होवे ॥१०॥

मन्त्र

8971

मा विदन् परिपन्थिनो य आसीदन्ति दंपती ।
सुगेन दुर्गमतीतामप द्रान्त्वरातयः ॥११॥

हे नव दम्पती ! यह जो तुम दोनों गृहस्थाश्रम में प्रविष्ट हुये हो, जिन दिव्य उदात्त विचारों के द्वारा प्रेरित होकर तुम इस सु अवस्था को प्राप्त हुये हो ऐसे सुयोग्य दम्पति को (ये परिपन्थिनो) भोग विलास रूपी शत्रु जो प्रायः (दम्पती आसीदन्ति) नव वर वधू को घेर लेते हैं मानो उनके समीप ही सदा रहते हैं वे दुष्ट (मा विदन) तुम को न प्राप्त कर सकें क्योंकि तुम अपने शुभ संकल्प साधन में इतने अधिक तत्पर रहो कि तुम से मिलने के लिये उनको अवसर ही न मिले। (सुगेन) अच्छे श्रेष्ठ लोगों के द्वारा गन्तव्य मार्ग से चल कर (दुर्गमतीताम्) समस्त विघ्नबाधाओं को पार करते जाओ। इस श्रेष्ट आश्रम में आकर कभी किसी कारणवश (अराति) दान न देने के भाव जब आयें वे भी तुम से (अपप्रान्तु) दूर भग जावें ॥११॥

मन्त्र

सं काशयामि वहतुं ब्रह्मणा गृहैरघोरेण चक्षुषा मित्रियेण ।
पर्याणद्धं विश्वरूपं यदस्ति स्योनं पतिभ्यः सविता तत् कृणोतु ॥१२॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे वर वधू ! (विश्वरुपं) अनेक उद्देश्यों की पूर्ति करने वाला (पर्याणद्धं) संयम नियम के द्वारा जो बधां हुआ सा है उस तुम्हारे संकल्प को (अघोरेण मित्रियेण ब्रह्मणा) पक्ष पात रहित स्नेहार्द सत्यासत्य विवेक की (चक्षुषा) दृष्टि से उस संकल्प रूपी (वहतुं) रथ को जिस पर चढ़ कर तुम दोनो गतिशील हो रहे हो ब्रह्मचर्य से गृहस्थ की ओर बढ़ रहे हो तुम्हारे उस शुद्ध संकल्प को इस भारी सभा में जिसमें बड़े २ विद्वान अनुभवी लोग पधारे हुये हैं उनके मध्य में मैं (संकाशयामि) प्रकाशित कर रहा हूँ अर्थात् गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करने वाले दम्पति किस उद्देश्य की पूर्ति के लिये इसमें प्रवेश ले रहे हैं इसका पता राज पण्डितों को अवश्य होना चाहिये जिससे कोई अयोग्य व्यक्ति इस आश्रम में प्रविष्ट होकर इसको कलंकित न करे। तुम दोनों का पवित्र संकल्प (स्योनं पतिभ्यः) तुम्हारे जितने रक्षक पालक हैं अज्ञान से ब्राह्मण, अन्याय से क्षत्रिय, अभाव से वैश्य, इन सभी रक्षकों के लिये सुखकारी हो (सविता) सबका उत्पादक परम पिता परमात्मा (तत्कृणोतु) तुम्हें इस कार्य को पूरा करने की सामर्थ्य प्रदान करे ॥१२॥

मन्त्र

शिवा नारीयमस्तमागन्निमं धाता लोकमस्यै दिदेश ।

अर्यमा भगो अश्विनोभा प्रजापतिः प्रजया वर्धयन्तु १३

पुरोहित वर से कहता है, हे वर ! (इयं शिवा नारी) यह जो कल्याणस्वरूपा देवी गृहस्थाश्रम के सम्पूर्ण भार ढोने वाली (नृ नये धातु पाठे) (अस्तमागन्) इस तेरे घर आ गई है। क्या तुम जानते हो कि यह इस अनजाने अपरिचित घर में क्यों किस लिये आयी है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह तो (धाता लोकमस्मै दिदेश) सबका प्रतिपालन करने वाले पुत्र की मैं मां बनूं बस इस उच्च भावना ने ही तो इसे इस गृहस्थाश्रम (लोक) का मार्ग निर्देश किया। (ताम्) उसको (अर्यमा भगो अश्विना उभा प्रजापतिः) न्यायकारी राजा दोनों कुल के पुरोहित धनैश्वर्य का पति वैश्य वर्ग प्रजापालक राज्याधिपति प्रजा के पालन करने योग्य वस्तुओं से इसको (वर्धयन्तु) बढ़ावे। (या) इन गुणों को तुम स्वयं धारण कर इसे बढ़ाओ। क्योंकि इस नये गृह में एक मात्र तुम्ही इसके परिचित हो। प्रत्येक पति बनने वाले को इन गुणों को अवश्य धारण करना चाहिये तभी वह पत्नी का अधिकारी होता है ॥१३॥

मन्त्र

आत्मन्वत्युर्वरा नारीयमागन् तस्यां नरो वपत बीजमस्याम् ।
सा वः प्रजां जनयद् वक्षणाभ्यो बिभ्रती दुग्धमृषभस्य रेतः॥१४॥

हे वर यह जो नव वधू तुम्हारे यहां आई है, जिसे तुमने प्राप्त किया है। (इयमात्मन्वती) यह कोई साधारण वधू नहीं किन्तु यह तो आत्मविश्वास से युक्त साहस की मूर्ति है। ब्रह्मचर्यकाल में जो घोर परिश्रम और कठिन साधनाओं को करके तुमने जिस वीर्य का संरक्षण किया वह तुम्हारा अमूल्य वीर्य (अस्याम) इसमें पड़कर व्यर्थ न होगा क्योंकि यह तो (उर्वरा) उसका अत्यधिक विस्तार करने वाली है (तस्यां नरः बीजम् वपत) सुसन्तान की कामना करने वाले प्रत्येक मनुष्य इस स्त्री में ही अपने वीर्य का वमन करता है। यह उस वीर्य को सन्तान रूप में बदल कर तुम्हें प्रदान करेगी (ऋषभस्य रेतः) तुम नौजवान के अमूल्य रत्न को (बिभ्रती) धारण करती हुई तुम्हारे अनुरूप पुत्र पैदा करेगी यह (वक्षणाभ्यः) अपनी कोख से पुत्र रत्न को जन्म देने वाली है, इसलिये पृथिवी के समान इसे भी रत्नगर्भा कहा गया है ॥१४॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्र

प्रति तिष्ठ विराडसि विष्णुरिवेह सरस्वति ।
सिनीवालि प्र जायतां भगस्य सुमतावसत् ॥१५॥

हे (सरस्वति) ज्ञान विज्ञान सम्पन्ना वधु ! तू इस पति के साथ इस आश्रम में (प्रतितिष्ठ) सम्यग् प्रकार से ठहरो। यद्यपि बाहर से शरीरादि को देखने में तो तुम छोटी दिखायी पड़ रही हो किन्तु जिस प्रकार (विष्णुः) सूर्य छोटा दिखाई देता हुआ भी सब पदार्थों में अपनी किरणों द्वारा व्याप्त रहता है (इव) उसके समान तुम भी (इह) इस आश्रम में अपने ज्ञान के द्वारा सब कार्यों में व्याप्त हुई हो, अतः (विराडसि) बहुत बड़ी हो। विशेष तेज से युक्त हो। हे (सिनीवालि) ऐश्वर्यों की वृद्धि करने वाली तू जिस घर में जावेगी उसको भरपूर कर देगी, उजड़ा घर भी बस जायेगा। तुम्हें जो सुमति मिली है उसी (सुमतौ) सुमति में (अवसत्) रहो ॥१५॥

मन्त्र

उद् व ऊर्मिः शम्या हन्त्वापो योक्त्राणि मुञ्चत ।
मादुष्कृतौ व्येनसावघ्न्यावशुनमारताम् ॥१६॥

हे (शम्या आपः) लज्जा विनय शर्मादि गुणों से सब के हृदय पर छा जाने वाली वधू (वः) तुम्हारे हृदयोदधि में उत्साह की (ऊर्मिः) तरङ्गें (उद) उठती रहें प्रतिदिन हिलोरे मारें। कुमार अवस्था में जो तुम्हारे ऊपर नियमों के अनेक प्रतिबन्धन लगे हुए थे वे (योक्त्राणि मुञ्चत) कठिन नियम बन्धन अब छूट गये, किन्तु हे वर वधू ! उस कड़े बन्धन से छूटने का यह अभिप्राय नहीं कि तुम मर्यादा का उल्लंघन करके विषय भोग के कीड़े बन जाओ। तुम (अदुष्कृतौ) बुरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्मों से रहित (वि एनसौ) विलासिता रूपी पाप से रहित होकर (अशुनम् मा) क्लेश को मत (आ अरताम्) प्राप्त करो। क्योंकि तुमने भोग के लिये नहीं अपितु प्रजा के लिये इस आश्रम में प्रवेश किया है। (प्रजायै गृहमेधीनाम्) ॥१६॥

मन्त्र

अघोरचक्षुरपतिघ्नी स्योना शग्मा सुशेवा सुयमा गृहेभ्यः ।
वीरसूर्देवृकामा सं त्वयैधिषीमहि सुमनस्यमाना ॥१७॥

वर वधू से कहता है कि हे वधू ! तुम पिता के घर को छोड़कर मेरे नये घर में आयी हो तुम्हारे स्वभाव का हमारे घर वालों को पता नहीं तू (अपतिघ्नी अघोर चक्षुः) अपनी प्रेममयी दृष्टि से मेरे लिये तो सुखकारी हो ही किन्तु हमारे घर वालों के लिये भी (स्योना) सुखदायिनी बनो, हे कल्याणकारिणी वधू ! तू (सुयमा) सभी यम नियमों का पालन करने वाली होकर (सुशेवा) सेवा के द्वारा उत्तम सुख देने वाली बन। हे (देवृकामा) दिव्य कामनाओं वाली इस सब का फल तुम्हें यह मिलेगा कि तुम (वीरसूः) धीर वीर पुत्र को पैदा करने वाली होगी। इन गुणों से युक्त (त्वया) तुम्हारे साथ हमारे परिवार के लोग (सुमनस्यमाना) प्रसन्न चित्त होकर (सम् एधिषीमहि) वे तथा हम सभी उत्तरोत्तर समृद्धि को प्राप्त करते जायें। नव वधुओं की प्रेम दृष्टि (अघोर चक्षुः) के बिना ही आजकल नववधू प्रवेश के तुरन्त बाद गृह कुरुक्षेत्र का एक सुन्दर मैदान बन जाता है, जिससे गृहस्थाश्रम, आश्रम न रहकर नरक बन जाता है ॥१७॥

मन्त्र

अदेवृघ्न्यपतिघ्नीहैधि शिवा पशुभ्यः सुयमा सुवर्चाः ।
प्रजावती वीरसूर्देवृकामा स्योनेममग्निं गार्हपत्यं सपर्य ॥१८॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर पक्ष का पुरोहित कहता है हे नव वधू ! तू (अदेवृघ्नी अपतिघ्नी) देवर तथा पति को तो सुख देने वाली होगी ही किन्तु पति के घर पर गौ आदि पशु भी हैं अतः उन (पशुभ्यः) पशुओं के लिये भी तुम सुख देने वाली बनो क्योंकि तुम (सुयमा) अहिंसादि यमों का पालन करने वाली हो। (अहिंसासत्यमस्तेयब्रह्मचर्याऽपरिग्रहाः) "योगदर्शन" इस यम के पालन के कारण पति के घर के पशु निर्भय होकर तुमसे प्रेम करने लगेंगे (अहिंसा प्रतिष्ठायां तत्सन्निधौवैर त्यागः। योग. द० तू (सुयमा) है अच्छे प्रकार यमों का पालन करने वाली है अतः (सुवर्चा) सुदीप्त कान्ती वाली है (वर्च दीप्तौ) धातु पाठ तुम्हारा यह तेज, यह सौन्दर्य पति का नाश करने वाला नहीं किन्तु पति को प्रसन्न करने वाला है। इसी को आधार मान कर कवि गुरु कालिदास ने पार्वती की मनोदशा का चित्रण किया है—

तथा समक्षं दहता मनोभवं,
पिनाकिना भग्नमनोरथा सति।
निनन्दरूपं हृदयेन पार्वती,
प्रियेषु सौभाग्य फला हि चारुता ॥

पति के प्रसन्न होने पर ही तो तू प्रजा वाली (प्रजावतीः) (देवृकामा) दिव्य कामनाओं वाली होगी। हे वधू ! तूने जिस कारण से गृहस्थाश्रम को स्वीकार किया है उस (गार्हपत्यं अग्निं सपर्य) गृहस्थाश्रम के संकल्प को सदा याद रख उसको हृदय में सत्कार पूर्वक रख तथा पति का सत्कार करने वाली बन उसकी प्रसन्नता के बिना तू (वीरसूः) पराक्रमी सन्तान को उत्पन्न करने वाली नहीं बन सकती (अप्रमोदात् पुनः पुंस प्रजनं न प्रवर्त्तते मनु० ॥१८॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्र

उत्तिष्ठेतः किमिच्छन्तीदमागा अहं त्वेडे अभिभूः स्वाद् गृहात् ।
शून्यैषी निर्ऋते याजगन्धोत्तिष्ठाराते प्र पत मेह रंस्थाः ॥१६॥

प्रसन्नता से उछलता हुआ वर कहता है कि मेरा घर अब तक सूना पड़ा हुआ था सब कुछ रहते हुये भी यहां दरिद्रता का डेरा लगा हुआ था किन्तु अब यहां सर्व लक्षण सम्पन्ना वधू आ गई अतः हे (निर्ऋते) पाप रूप अलक्ष्मि ! तू (इतः उत्तिष्ठ) यहां से उठ कर भाग जा तू (किम् इच्छन्ती) यहां क्या चाहती हुई आयी है जब तू यहां रहने का विचार करती थी तब मैं अकेला था किन्तु अब अकेला नहीं, इस घर में लक्ष्मी का प्रवेश हो चुका है इस लिये (अहं त्वेडे अभिभूः स्वाद गृहात्) मैं तुम्हें अपने घर से पूर्णतया निकालने में समर्थ हो गया हूँ हे मेरे घर को (शून्यैषी) सूना करने की इच्छा करने वाली (या) जो तुम (अजगन्ध) आयी है हे (अराते) अदान शीले (उत्तिष्ठ प्र पत) उठ दूर भाग (इह मा रंस्था) इस मेरे घर में अब मत रमण कर ॥१६॥

मन्त्र

यदा गार्हपत्यमसपर्यैत् पूर्वमग्निं वधूरियम् ।
अधा सरस्वत्यै नारि पितृभ्यश्च नमस्कुरु ॥२०॥

पुरोहित कहता है कि हे वर ! (इयम् वधूः यदा) देखना जब यह वधू (पूर्वम् गार्हपत्यमग्निं असपर्यैत्) अपने गार्हपत्य अग्नि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की सेवा में अच्छी प्रकार तत्पर हो दिन रात, संकल्पानि को सामने रखती हो इसे अपने ध्येय का सदा ध्यान रहता हो और उसके अनुसार आचरण भी करती हो तब भी यह गृहस्थाश्रम को ढोने वाली (नारि) उन विचारों को और सुदृढ़ बनाने के लिये (अधासरस्वत्यै) नित्य प्रति स्वाध्याय अवश्य करे सरस्वती की सेवा के बिना अहंकार का बढ़ना तथा प्रमाद का आना स्वाभाविक हो जाता है अतः इसके गुरुकुल की आचार्या ने स्नातिका बनते समय जो उपदेश दिया 'स्वाध्यायान्माप्रमदः' देखना कभी स्वाध्याय करने से प्रमाद मत करना, इसमें व्यर्थ समय नष्ट होता है ऐसा विचार मत करना। (पितृभ्यश्च नमस्कुरु) और जो बड़े बूढ़े लोग हैं जिन्होंने इस आश्रम का अनुभव प्राप्त किया है सत्कार पूर्वक उनका सत्परामर्श भी लेते रहना क्योंकि अनुभव ज्ञान पुस्तकीय ज्ञान से अधिक महत्व शाली होता। परामर्श लेना ही उनको वास्तविक नमस्कार करना है। इस बात का इसे याद दिलाते रहना ।।२०।।

मन्त्र

शर्म वर्मैतदा हरास्यै नार्या उपस्तरे ।

सिनीवालि प्र जायतां भगस्य सुमतावसत् ।।२१।।

हे वर ! तुमने इस नव वधू का हाथ पकड़ लिया है यह तो तुम्हारे साथ आयी है तुम ही (अस्यै नार्या) इस नव वधू के लिये (वर्म शर्म) सब प्रकार के कष्टों को दूर कर सुख देने वाले (उपस्तरे एतद) आच्छादनादि तथा भोजन सामग्री (आहर) ले आया करना जिससे इसको अपने भोजनादि की चिन्ता स्वयं न करनी पड़े यह तो घर की व्यवस्थापिका है जो तुम बाहर से लाओगे उसको यह ठीक प्रकार सजा कर रखेगी, बाहर से लाना तो तुम्हारा ही कार्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। हे वधू ! (सिनीवालि) हे ऐश्वर्योंवाली तुम भी निश्चिन्त होकर इस (भगस्य) नाना ऐश्वर्यों से युक्त पति की (सुमतौ असत्) सुमति में रह कर (प्रजापतां) विविध प्रजा रूपी धन को बढ़ाओ ॥२१॥

मन्त्र

यं बल्बजं न्यस्यथ चर्म चोपस्तृणीथन ।

तदा रोहतु सुप्रजा या कन्या विन्दते पतिम् ॥२२

हे कन्ये ! अब तुम गृहस्थ आश्रम में आ गयी हो इसमें ब्रह्मचर्य आश्रम के समान कठोर तपस्या नहीं करनी पड़ेगी इस लिये इसमें पत्थर की शिला या काष्ठ पटल पर सोने का नियम नहीं इसमें तो कुछ मुलायम आसन तथा शय्या का प्रयोग करना है किन्तु वह भी इतना मुलायम न हो कि शिथिल शरीर होकर रोगी हो जाये, अतः (यं बल्बजं न्यस्यथ) जिस प्रकार दर्भ कोमल होते हुये भी नैरोग्य प्रदाता तथा रोग दायक मुलायम भी नहीं है इसी प्रकार का आसन तुम बिछाया करो (चर्म चोपस्तृणीथन) और उस आसन पर चमड़े के समान दृढ़ तथा टिकाऊ स्तर को काम में ले आना जिससे प्रति दिन तुम्हें आसन की ही चिन्ता न लगी रहे। (या कन्या तदारोहतु) जो कुल कन्यायें ऐसे सुदृढ़ आसनों का प्रयोग करती हैं वे ही सुप्रजा, स्वस्थ सुन्दर सन्तान वाली होकर, सच्चे रूप में (विन्दते पतिम्) पति को प्राप्त करती हैं ऐसा माना जाता है, अन्यथा सन्तान हीन कन्या को पति प्राप्त करने का लाभ ही क्या हुआ ॥२२॥

मन्त्र

उप स्तृणीहि बल्बजमधि चर्मणि रोहिते ।

तत्रोपविश्य सुप्रजा इममग्नि सपर्यतु ॥२३॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरोहित अब वर से कहते हैं कि हे नव गृहाधिपति ! (रोहिते चर्मणि अधिबल्बजं उपस्तृणीहि) जिस प्रकार से यह नव वधू दर्भ चमड़े आदि के समान नैरोग्यकारी उपकरणों को ही धारण करती उन्हें प्रयोग में लाती है इसी प्रकार तुम भी ऐसे ही आसनों को (उपस्तृणीहि) बिछाया करो जिससे तुम्हारे वीर्य कोष पर दुष्प्रभाव न पड़े (तत्रोपविश्य) ऐसे आसनादि पर बैठने से तुम्हारा वीर्य पुष्ट होगा तथा तुम (सुप्रजा) उत्तम स्वस्थ सन्तान के पिता बनोगे। (इममग्निं सपर्यतु) जिस व्रताग्नि को धारण कर तुम इस आश्रम में प्रविष्ट हुये हो उसको सर्वदा ध्यान में रखो उसके प्रतिपालन से सदा उसकी पूजा करते रहो ।।२३।।

मन्त्र

आ रोह चर्मोप सीदाग्निमेष देवो हन्ति रक्षांसि सर्वा ।

इह प्रजां जनय पत्ये अस्मै सुज्यैष्ठयो भवत् पुत्रस्त एषः।।२४।।

हे नव वधू ! (चर्म आरोह) जिस प्रकार चमड़ा समस्त अङ्गों प्रत्यङ्गों को आच्छादित किये हुये है इसी प्रकार तू भी अपने शुभ गुणों के प्रभाव से पति के परिवार के प्रत्येक व्यक्ति के हृदय को ढक लो, जीत लो चमड़े की भांति तुम सबका आवरण बन जाओ। (अग्निमुपसीद) अपने संकल्पाग्नि के सदा समीप बैठो उसे कभी मत भूलो क्योंकि (एष देवो हन्ति रक्षांसि सर्वा) यह संकल्पाग्नि देव ही जब तुम्हारे मन में कभी गृहस्थाश्रम की कठिनाई के कारण अवसाद की भावनायें जागृत हों और तुम्हें आगे बढ़ने से रोकें उस समय यह संकल्प देव ही उनको मार भगायेगा (अस्मैपत्ये) जिस पति ने भरी सभा में तुम्हारा हाथ पकड़ कर तुम्हे अपना लिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है उसके लिये तुम्हारा कर्तव्य यह है कि तुम (इह प्रजां जनय) इसके घर में पुत्र उत्पन्न करो (ते एषः पुत्रः) तुम्हारा यह पुत्र (सुज्यैष्ठयो भवत्) उत्तम श्रेष्ठ गुणों को धारण करने वाला होवे ॥२४॥

मन्त्र

वि तिष्ठन्तां मातुरस्या उपस्थान्नानारूपाः पशवो जायमानाः सुमङ्गल्युप सीदेममग्निं संपत्नी प्रति भूषेह देवान् ॥२५॥

पुरोहित वधू को आशीर्वाद देते हुये कहते हैं। (अस्याः मातुः उपस्थात्) हे प्रभो इस, भविष्य में माता बनने वाली वधू की गोदी से (नाना रूपाः पशवः जाय मानाः) अनेक शास्त्रों में कुशल अनेक विद्याओं के धुर्न्धर विद्वान पुत्र उत्पन्न होवें, वे अनेक शास्त्र प्रवीण तेरे पुत्र विद्यार्जन करने के पश्चात् एक ही स्थान पर आलसी बन कर बैठे ही न रहें किन्तु (वि तिष्ठन्ताम्) अपनी विद्या के प्रचार हेतु देश देशान्तर में भी प्रस्थान करें वे अपनी विद्या की दुन्दभी बजाने वाले बनें। हे सुमङ्गलि! मङ्गलों की वर्षा करने वाली देवि! (संपन्ती प्रत्येक शुभ श्रेष्ठ कार्य में पति का साथ न छोड़ने वाली देवि (पत्युर्नो यज्ञ संयोगे) अष्टाध्यायी ४-१-३३) (यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म) शतपथ (इममग्निमुपसीद्) इस गार्हपत्य अग्नि की प्रतिदिन उपासना किया करना इसे सदा ध्यान में रखना। (इह देवान् प्रति भूष) जिस दिव्य ज्ञान का अर्जन तुमने ब्रह्मचर्य जीवन में गुरुकुल में किया है उस ज्ञान को कार्यान्वित कर उसे चरितार्थ कर उन्हें भूषित कर उस ज्ञान की शोभा तो इसी में है कि उसके अनुसार कार्य किया जाय अन्यथा बिना क्रिया के ज्ञान व्यर्थ है।

'दुर्भगाभरण प्रायो ज्ञानं भारं क्रियां विना'।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस मन्त्र में आये पशु शब्द का अर्थ मैंने पुत्र किया है सो यह मेरी कोरी कल्पना नहीं किन्तु स्वयं वेद ने ही मनुष्य को पशु कहा है देवा यद् यज्ञं तन्वाना अवध्नन् पुरुषं पशुम् ।यजु। ।३१। ॥२५

मन्त्र

सुमङ्गली प्र तरणी गृहाणां सुशेवा पत्ये श्वशुराय शंभूः ।
स्योना श्वश्र्वै प्र गृहान् विशेमान् २६

हे मङ्गल मूर्ति सुभगे नव वधू ! तू जिस घर में आई है उस (प्रतरणी गृहाणाम) घर के सात कुल आगे तथा सात कुल पीछे के लोगों को तार देने वाली है क्योंकि तुम्हारी गोद से जो नाना शास्त्र विशारद पुत्र होंगे वे इसकी धवल कीर्ति में चार चांद लगा देंगे। इस श्रेष्ठ गुण के कारण ही तू अपने (पसे सुशेवा) पति के लिये सुसेवनीय तथा (श्वशुराय शंभूः) श्वशुर के लिये कल्याण करने वाली एवं (श्वश्र्वै स्योना) सास के लिये सुख देने वाली है। तू शीघ्र ही अपने इस सद् व्यवहार से (इमान् गृहान् प्रविश) पति के घर वालों में घुल मिल जा, इन के हृदय में अपना सुन्दर स्थान बनालो ॥२६॥

मन्त्र

स्योना भव श्वशुरेभ्यः स्योना पत्ये गृहेभ्यः ।
स्योनास्यै सर्वस्यै विशे स्योना पुष्टायैषां भव ॥२७॥

हे सुख स्वरूपा वधू ! (स्योना भव श्वशुरेभ्यः स्योना पत्ये गृहेभ्यः) तुम्हारा इस गृह में प्रवेश सास ससुर पति के लिये तो सुख दायक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है ही किन्तु (अस्यै सर्वस्यै विशे) इस सम्पूर्ण प्रजा के लिये भी तुम्हारा यह गृह प्रवेश (स्योना भव) सुख दायक हो। (एषां पुष्टाय स्योनाभव) इस समस्त प्रजा के पालन पोषण करने वाली तुम बनों राष्ट्र सुप्रजा से समृद्ध हो यह उत्तरदायित्व तुम पर ही है ॥२७॥

मन्त्र

सुमङ्गलीरियं वधूरिमां समेत पश्यत ।

सौभाग्यमस्यै दत्वा दौर्भाग्यैर्विपरेतन ॥२८॥

हे जनवासे में आये हुये भद्र पुरुषो ! (इयं सुमङ्गली वधूः) यह मङ्गलमयी वधू तो वही है जिसने भरी सभा में प्रतिज्ञा पूर्वक अपना हाथ वर को पकड़ाया। इसके इस पवित्र साहस को देखो (इमां समेत पश्यत) इसको भली भांति देखो। अब आप सभी का कर्तव्य यह है कि इसके इस पवित्र कार्य के लिये तुम (अस्यै सौभाग्यम दत्वा) और कुछ नहीं तो अपने सौभाग्य का आशीर्वाद ही इसे दो देखना कहीं यदि तुम्हारे मन में कोई दौर्भाग्य की भावना इसके प्रति आ गयी हो तो उसे यहां प्रकाशित मत करना उसे मन ही मन लेकर लौट जाना (दौर्भाग्यै विपरेतन) ॥२८॥

मन्त्र

या दुर्हार्दो युवतयो याश्चेह जरतीरपि ।

वर्चो न्व स्यै सं दत्ताथास्तं विपरेतन ॥२९॥

(या दुर्हार्दो युवतयः) जो दुष्ट हृदय वाली नव युवती स्त्रियां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा (याश्चजरतीरपि इह) जो दुष्ट हृदय वाली वृद्ध स्त्रियां हैं जिन्हें अपने पाप हृदय वाली होने के कारण ही कोई सन्तान नहीं प्राप्त हुई या प्राप्त तो हुई किन्तु सुयोग्य नहीं हुई वे सभी इस नव वधू से ही अपनी मनोकामना की पूर्ति की आशा करती हुई (अस्यै नु वर्चः) इस नव वधू को ही अपनी दिव्य संकल्प भावना प्रकाशित करें इसी में उनका कल्याण है और जो उनके दुष्ट स्वभाव के कारण अभद्र विचार हैं। (अथ अस्तं विपरेतन) उन्हें अपने साथ लेकर घर लौट जायें ॥२६॥

मन्त्र

रुक्मप्रस्तरणं वह्यं विश्वा रूपाणि बिभ्रतम् ।

आरोहत् सूर्या सावित्री बृहते सौभगायकम् ॥३०॥

जिस प्रकार (सावित्री सूर्या) सकल प्रजा को उत्पादक शक्ति प्रदान करने में समर्थ सूर्य की (आभा सूर्या विश्वा रूपाणि विभ्रतम) आभा सूर्या अनेक रंगों को धारण करती हुई (रुक्म प्रस्तरणं वह्यं) स्वर्णमयी किरण रूपी रथ पर (आरोहत्) सवार होकर (बृहते सौभगायकम) बहुत बड़े सौभाग्य को उत्पन्न करने वाली होती है। इस जीवन प्रदायिनी आभा के कारण ही संसार में सूर्य की पूजा होती है उसी प्रकार हे नव वधू! तुम भी पति के बहुत बड़े उद्देश्य की पूर्ति करने वाली पति के लिये सूर्य की आभा के समान हो॥३०॥

मन्त्र

आ रोह तल्पं सुमनस्यमानेह प्रजां जनय पत्ये अस्मै ।

इन्द्राणीव सुबुधाबुध्यमाना ज्योतिरग्राउषसः प्रति जागरासि ३१

हे नव वधू तुम (सुमनस्यमाना) प्रसन्न चित्त होकर (इह तल्पं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आरोह) इस गृहाश्रम में प्रवेश करो इस समय प्रवेश करने से तुम्हारी कोई निन्दा नहीं होगी क्योंकि गुरुकुल की आचार्या ने तुम्हें इस में प्रवेश करने की स्वीकृति दे दी है (खट् वाक्षेपे) "अष्टाध्यायी" गुरु की आज्ञा के बिना गृहाश्रम में प्रवेश करने वाला निन्दनीय होता है। "अधीत्य स्नात्वा गुरुभिरनुज्ञातेन खट् वारोढव्या। य इदानीम् अतोऽन्यथा करोति स उच्यते खट् वारूढोऽयं जाल्मः॥ महाभाष्य ।२। ।१। ।२६॥

तुम दोनों ही इस दोष से मुक्त हो अतः निर्भयता पूर्वक इस आश्रम में प्रवेश करो हे वधू ! (अस्मै पत्ये प्रजांजनय) इस पति के लिये सन्तान उत्पन्न करो। (उषसः अग्रा ज्योति इन्द्राणी इव) जिस प्रकार प्रातःकाल सूर्य के आने से पूर्व उसकी ज्योति उषा उससे पहले ही आ जाती है उसी प्रकार (सुबुधा बुध्यमाना) उत्तम ज्ञान से युक्त होकर सदा सचेत रहो तथा सन्तान रूपी कमल इस संसार सागर में विकसित होते रहें अतः पति से आगे ही तुम इस कार्य में (प्रति-जागरासि) सदा जागरूक रहा करना ॥३१॥

मन्त्र

देवा अग्रे न्यपद्यन्त पत्नीः समस्पृशन्त तन्वस्तनूभिः।
सूर्येव नारि विश्वरूपा महित्वा प्रजावती पत्या सं भवेह ॥३२॥

हे देवि ! केवल तुम्हें ही इस आश्रम में प्रवेश करके सन्तान उत्पन्न करने को कहा जा रहा है सो बात नहीं किन्तु तुमसे पूर्व (अग्रे देवा पत्नीः न्यपद्यन्त तन्वः तनूभिः समस्पृशन्तः) और विद्वान् भी अपनी धर्म पत्नियों के साथ मिलकर सन्तान उत्पन्न करते रहे हैं। अतः हे (नारि) गृहस्थाश्रम को टोकर आगे ले चलने वाली देवी (सूर्या इव महित्वा बिश्वरूपा) सूर्य की आभा के समान अपनी अपार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महिमा से अनेक रूपों वाली हो। आजकल के भोग परायण युग में पत्नी को केवल एक ही रूप में विद्यमान मानते हैं किन्तु वेद उसे (विश्वरूपा) नाना रूपों वाली कहता है वैदिक युग में महर्षि बाल्मीक ने पत्नी के अनेक रूपों का वर्णन दशरथ के मुंह से कहलाया है। "यदा यदा च कौशल्या दासीव च सखीव च भार्यावद् भगिनीवच्च मातृवच्चोपतिष्ठति।" "सततं प्रिय कामा मे प्रिय पुत्र प्रियं वद।" इसलिये (इह पत्या सं भव प्रजावती) इस गृहस्थाश्रम में पति के साथ मिलकर सन्तान वाली बनो ॥३२॥

मन्त्र

उत्तिष्ठेतो विश्वावसो नमसेडामहे त्वा।

जामिमिच्छ पितृषदं न्यक्तां स ते भागो जनुषा तस्य विद्धि।३३।

पुरोहित अब पुनः वर को उत्साहित करते हुए कह रहे हैं कि हे वर! तू यह मत डर कि सन्तान उत्पन्न होगी तो उसके खाने पीने के प्रबन्ध का व्यर्थ बखेड़ा खड़ा हो जायगा उसके लिये धन कहां से आयेगा। ओह तू अपनी अपार शक्ति को नहीं जानता तू तो (विश्वावसु)समस्त धन ऐश्वर्यों का अधिपति है। हे सकल ऐश्वर्यों के स्वामी! तुम्हारे पास धन की क्या कमी। अतः (उत्तिष्ठ) उठो खड़े हो जाओ अपने उत्तरदायित्व को सम्भालो। अच्छा तो (दुर्जतोष न्याय) से मान लिया यदि तुम्हारे पास कभी धन की कमी भी पड़ जाये। यद्यपि यह असम्भव कल्प है तो हम सब "नमसेडामहे" अन्नादि से तुम्हारी सहायता करेंगे। तुम्हारा सत्कार करेंगे। "नमः इति अन्न नाम निघण्ट" यह है वैदिक पुरोहित का स्वरूप यजमान को ठगता नहीं किन्तु समय पड़ने पर उसकी सहायता भी करता है। (पितृषपदं त्यक्तां) पिता के घर को छोड़कर आई हुई (जाभिमिच्छ) इस वधू को स्वीकार करो (स ते भागो) यह तुम्हारी अङ्ग रूप से अर्द्धाङ्गिनी है इसके बिना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम अपूर्ण थे केवल (जनुषा) सन्तान उत्पत्ति कर्म में ही वह तुम्हारी जाया है अन्य अवस्थाओं में मित्र, बहिन, माता, दासी के समान (तस्य विद्धि) उसको जानना इसी में तुम्हारा और इसका कल्याण है ॥३३॥

मन्त्र

अप्सरसः सधमादं मदन्ति हविर्धानमन्तरा सूर्यं च ।
तास्ते जनित्रमभि ताः परेहि नमस्ते गन्धर्वर्तुना कृणोमि॥३४॥

हे वर वधू ! जिस प्रकार (अन्तरा सूर्यं च हविर्धानम्) सूर्य और पृथिवी के बीच में सूर्या सूर्या की आभा किरण सानन्द क्रोड़ा करती (सधमादं मदन्ति) हैं उसी प्रकार तुम दोनों गार्हपत्यागार एवं आहवनीयागार के मध्य में सानन्द गृहस्थाश्रम के सुख को भोगो इस प्रकार से प्रसन्नता पूर्वक रहने की शिक्षा वे सूर्य की प्रभायें ही तुमको प्रदान करेंगी। (ताः परेहि) उनसे ही इसको ग्रहण करो। इस प्रकार सानन्द खेलने की शिक्षा की (तास्ते जनित्रम्) वे ही जन्मदात्री हैं एक मात्र वही सिखाने वाली हैं। हे गन्धर्व ! तुम इस वधू के साथ (ऋतुना कृणोमि) केवल ऋतु काल में ही रहने के अधिकारी हो इस मर्यादा का पालन करने से ही तुम्हारा (नमस्ते) सब आदर करेंगे ॥३४॥

मन्त्र

नमो गन्धर्वस्य नमसे नमो भामाय चक्षुषे च कृण्मः ।
विश्वावसो ब्रह्मणा ते नमोऽभि जाया अप्सरसः परेहि॥३५॥

हे वर ! यह ठीक है कि तुम्हारी यह यौवन अवस्था है इस अवस्था में स्वाभाविक रूप से उद्धतपन आ ही जाता है किन्तु तुम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समयानुकूल बड़ों के सामने इतने विनम्र भी बनो जिससे बड़े बूढ़े लोग तुम्हारी विनम्रता के बारे में सगर्व कह सकें कि (सा मय्येव) स्खलन्ती कप्थयति विनपालं कृतन्ते प्रभुत्वम् (नमसे गन्धर्वस्य नम तुम्हारी विनम्रता के लिये नमस्कार। किन्तु विनम्र बनते बनते इतना मत विनम्र बन जाना कि बिल्कुल दब्बू ही हो जाना (भामाय चक्षुषे च नमः कृण्मः) कुछ तुम्हारे अन्दर मन्यु भी होना चाहिये तुम्हारी आंखें अन्याय के प्रतिकार के लिये रक्त वर्ण की हो जावें इससे तुम्हारे स्वाभिमान की रक्षा होगी। संसार तुम्हारा सत्कार करेगा। हे (विश्वावसो) धन के स्वामी ! जब तुम (जाया अप्सरसः ब्रह्मणा अभि परेहि) अपनी स्त्री के समीप ब्रह्म शक्ति अर्थात् अपने शीलादि गुणों से युक्त होकर ही जाओगे पत्नी के दरबार में भुज बल, धन बल, रूप बल आदि सभी बलों को छोड़ कर केवल ब्रह्म बल से ही उसे जीतोगे तब (ते नमः) तुम्हारा लोग आदर करेंगे। इसी रूप में तुम उसके पति हो। ब्राह्मणश्चेद्‌ हस्तमग्रहीत स एव पतिरेकधा ॥ अथर्वः ॥३५॥

मन्त्र

राया वयं सुमनसः स्यामोदितो गन्धर्वमावीवृताम् ।

अगन्त्स देवः परमं सधस्थमगन्म यत्र प्रतिरन्त आयुः ॥३६॥

अब वर वधू कहते हैं कि हे पुरोहित जी ! अब तक जो उपदेश आपने हमें दिये हैं उसके लिये हम आपके कृतज्ञ हैं, आपके उपदेशानुसार चल कर (वयं सुमनसः) हम एक दूसरे के प्रति प्रीति युक्त मन वाले हो कर (राया स्याम) धनैश्वर्यों से सम्पन्न होंगे। अब (इतः गन्धर्वम् आवीवृताम्) इससे आगे के व्यवहारिक जीवन में हम विशेष प्रेम युक्त आचरण को स्वीकार करेंगे। हम, आप सभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को विश्वास दिलाते हैं कि इस गृहस्थाश्रम से उत्कृष्ट गुण युक्त सन्तान पैदा करेंगे क्योंकि (सः देवः परमं सधस्थं अगन्) वह दिव्य गुणों से युक्त पुत्र इसी आश्रम से ही तो प्राप्त होता है। यहां हम सन्तान तो उत्पन्न करेंगे किन्तु फिर भी इतने संयमी रहेंगे कि (यत्र आयुः प्रतिरन्तः अगन्म) जिसमें नित्य प्रति दीर्घ आयु को प्राप्त करें ॥३६॥

मन्त्र

सं पितरावृत्विये सृजेथां माता पिता च रेतसो भवाथः ।
मर्य इव योषामधिरोहयैनां प्रजां कृण्वाथामिह पुष्यतं रयिम्
॥३७॥

पुरोहित कहते हैं हे भविष्य में माता पिता होने वाले वर वधू! (पितरौ) (ऋत्विये संसृजेथां) गृहस्थ धर्म के अनुसार प्रत्येक ऋतु काल में संयुक्त होवो क्योंकि (रेतसो माता पिता च भवाथः) रज वीर्य के संयोग से ही तो तुम माता पिता बनोगे जब सन्तान ही नहीं होगी तो माता पिता किसके कहलाओगे (मर्यः इव एना योषां अधिरोहय) जिस प्रकार अन्य स्त्री पुरुष परस्पर में मिल कर ही सन्तान उत्पन्न करते हैं उसी भांति तुम भी करो । (इह प्रजां कृण्वाथां) इस आश्रम में सन्तान उत्पन्न करो और (रयिं पुष्यतः) सन्तान रूप धन को पालन पोषण के द्वारा खूब बढ़ाओ ॥३७॥

मन्त्र

तां पूषं छिवतमामेरयस्व यस्यां बीजं मनुष्या२ वपन्ति ।
या न ऊरू उशती विश्रयाति यस्यामुशन्तः प्रहरेम शेपः ॥३८॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे पूषन् ! पालन कर्ता वर ! यदि यह वधू सन्तान के महत्व को न समझ कर सन्तानोत्पत्ति कर्म से घबराये भयभीत सी होवे उस समय तुम्हारा कर्तव्य है कि (शिवतमाम ताम्) इस कल्याणों की खान नव वधू की बलात् इस कार्य में प्रेरित न करके अच्छे २ उपदेशों द्वारा सन्तान सुख का लाभ बता कर इसे प्रेरित करो (एरयस्व) क्योंकि (मनुष्याः यस्यां बीजं वपन्ति) सन्तान रूपी धन को प्राप्त करने के लिये सभी मनुष्य इस स्त्री में ही बीज बोते हैं जैसे कृषि लाभ के इच्छुक किसान खेत में बीज बोते हैं। वेद की इसी बात को भगवान मनु ने यों कहा है।

क्षेत्र भूता स्मृता नारी बीज भूतः स्मृतः पुमान् ।
क्षेत्र बीज समायोगात् सम्भवः सर्व देहीनाम् ॥

जब सन्तान के लाभ को यह देवी समझ लेगी तो (उशती ऊरु विश्रयाति या) स्वयं ही सन्तान की कामना करती हुई वीर्य को विशेष रूप से धारण करेगी और (यस्याम् उशन्तः प्रहरेय शेयः) जिसमें सन्तान के अभिलाषी लोग ही वीर्याधान करें विषयानन्द के लिये नहीं ॥३८॥

मन्त्र

आ रोहोरुमुप धत्स्व हस्तं परि ष्वजस्व जायां सुमनस्यमानः ।
प्रजां कृण्वाथामिह मोदमानौ दीर्घं वामायुः सविता कृणोतु ।३९

हे वर ! जब तुम अपनी (जायां) स्त्री के परिष्वजस्व आरोह उरुमुपधत्स्व हस्तं) समीप जाकर उसका हाथ पकड़ना। तो उस समय तुम एक बात का ध्यान रखना जब सन्तानोत्पत्ति के लिये तुम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके पास मिलो (सुमनस्यमानः) प्रसन्न चित्त होकर ही जाना उस समय रोदूं बन कर मत जाना। हे वर वधू! तुम दोनों (इह प्रजां कृण्वाथा मोदमानौ) इस गृहस्थाश्रम में आनन्द करते हुये प्रजा को उत्पन्न करो तुम्हें यह भय नहीं होना चाहिये कि इस कर्म से तो हमारे रज वीर्य की क्षति होगी जिसके कारण हमारी आयु क्षीण होगी (सविता) प्रजा पालक राजा तुम्हारी इस कार्य में आयी क्षीणता अच्छे२ पौष्टिक भोज्य पदार्थों को खिलाकर (वाम आयुः दीर्घं कृणोतु) तुम दोनों की आयु क्षीण शक्ति को पुनः पूर्ण कर देगा। राज्य की ओर से यह देख रेख होनी चाहिये की जो दम्पती राष्ट्र के लिये अमूल्य सन्तान उत्पन्न करते हैं। उनको खाद्य पदार्थ घृत दुग्धादि की तो कोई कमी नहीं (दीर्घं वामायुः सविता कृणोतु) का ठीक अभिप्राय यही है ॥३६॥

मन्त्र

आ वां प्रजां जनयतु प्रजापतिरहोरात्राभ्यां समनक्त्वर्यमा।
अदुर्मङ्गली पतिलोकमा विशेमं शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ४०

हे वर वधू (प्रजापतिः) प्रजाओं का परिपालक राजा जिसने राष्ट्र की गर्भिणी स्त्रियों की विशेष देखभाल के लिये नये विभाग नियुक्त किये हैं वह विभाग (वाम् प्रजां जनयतु) वह विभाग तुम्हारी सदा देख रेख करे जिससे ध्वंस यमादि किसी कारण से गर्भ पूर्ण होने से पूर्व ही उत्पन्न न हो जावे राजा की इच्छानुसार सन्तान पूर्ण होने पर ही उत्पन्न हो (ठीक समय पर ही राज्य में सन्तान हो कोई गर्भ पात आदि न करा सके इसकी देख रेख राज्य की ओर से होनी चाहिये।) अर्यमा) न्यायकारी विद्वान पुरोहित लोग यदि तुम्हारे अन्दर किसी कारण वश परस्पर में मतभेद हो गया हो तो उसको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूर कराके (समनक्तु) तुम में मेल कराते रहें। हे वधू ! (अदुर्मङ्गली पतिलोकमाविशेमं) सकल अमङ्गलों से रहित होकर तुम इस पति के घर में प्रवेश कर रही हो तुम्हारे आते ही हमारे यजमान के (शंनोभव द्विपदे शं चतुष्पदे) पशु पक्षी सभी कल्याण व सुख का अनुभव करें तुम इनके लिये कल्याणकारिणी बनो ॥४०॥

मन्त्र

देवैर्दत्तं मनुना साकमेतद् वाधूयं वासो वध्वश्च वस्त्रम् ।
यो ब्रह्मणे चिकितुषे ददाति स इद रक्षांसि तल्पानि हन्ति ॥४१

हे वर वधू ! तुम दोनों के लिये यह जो (वाधूयं वासः वध्वश्च वस्त्रम्) नया गृह एवं वस्त्र (वस निवासे, वस् अच्छादने) धातु पाठे। (मनुना साकम् देवैः दत्तम्) पृथक दिया गया है यह कोई साधारण उपेक्षा वृत्ति से बनाया हुआ नहीं है किन्तु मनन पूर्वक योग्य शिल्पकारों के द्वारा निर्माण करा के दिया जा रहा है इसके उपरान्त भी तुम्हें किसी प्रकार का भय नहीं रहे अतः तुम्हारे प्रवेश से पूर्व (चिकितुषे ब्रह्मणे ददाति) गृहशास्त्र कुशल ब्राह्मणों को दिखाया, निरीक्षण के लिये दिया जा चुका है उन विज्ञ ब्राह्मणों का निरीक्षण ही सब विकारों को दूर कर चुका है (स इद् रक्षांसि तल्पानि हन्ति) भला उनके निरीक्षण के पश्चात् भी कोई दोष रह सकता है कदापि नहीं अतः निर्भय होकर इस शयन गृह में शयनादि करो॥४१॥

मन्त्र

यं मे दत्तो ब्रह्मभागं वधूयोर्वाधूयं वासो वध्वश्च वस्त्रम् ।
युवं ब्रह्मणेऽनुमन्यमानौ बृहस्पते साकमिन्द्रश्च दत्तम् ॥४२॥

वर पक्ष का पुरोहित कहता है कि हे वर वधू ! (वधूयोः वाधुयं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वासः बध्वश्चवस्त्रम) तुम्हारे निवास करने तथा पहनने के वस्त्र का जो (ब्रह्मभाग) अर्थात तुम्हारे गृहस्थ जीवन के रहने वाले जीवन में तुम्हारे घर पर दैनिक नैमित्तिक यज्ञादि होते हैं या नहीं तुम दोनों आध्यात्मिक उन्नति भी करते हो या नहीं धार्मिक कार्यों के लिये स्वच्छ वस्त्र पृथक है वा नहीं इसकी देख रेख करने के लिये (मे ब्रह्मणे दत्तम) मुझ ब्राह्मण को नियुक्त किया गया है सो मैं इसीलिये तुम दोनों को यह शिक्षा दे रहा हूं। क्योंकि (नित्यमनुग्रहत वासाः सुमना सुगन्धिस्यात् , न जीर्णमलवद् वासा भवेद विभवे सति) नित्य प्रति स्वच्छ सुगन्ध बिना फटे हुये कपड़े पहनने चाहियें अधिक धन न होने पर भी फटा मैला वस्त्र नहीं धारण करना चाहिये। यह कार्य भार मैंने स्वयं स्वेच्छा से लिया है सो बात नहीं किन्तु (वृहस्पते) राज पुरोहित ने (इन्द्रश्च साकम दत्तम) राजा से मिलकर यह कार्य मुझे दिया है और (युवं अनुमन्यमानौ) तुम दोनों ने भी परस्पर सलाह करके मुझे पुरोहित चुना है इसलिये मैं कह रहा हूँ और तुम मेरे कहे अनुसार करना ॥४२॥

मन्त्र

स्योनाद्योनेरधि बुध्यमानौ हसामुदौ महसा मोदमानौ ।
सुगू सुपुत्रौ सुगृहौ तराथो जीवावुषसो विभातीः ४३।

हे वर वधू ! अधिक क्या कहें तुम दोनों (स्योनाद द्योनेः) सुख के कारण ज्ञान विज्ञान को (अधिबुध्यमानौ) जानते हुए सर्वदा सत्कार्य में जागरुक रहते हुये (हसामुदौ महसा मोदमानौ) आपस में हंसते खेलते हुए बहुत प्रसन्नता पूर्वक रहते हुये (सुगू) संयम नियम के द्वारा अच्छी इन्द्रियों वाले होकर (सुपुत्रौ सुगृहौ) उत्तम सन्तान तथा श्रेष्ठ घर वाले बनो (जीवौ) तुम दोनों प्राणी जिस प्रकार सूर्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रात्रि को पार कर प्रातःकाल के समय विशेष शोभा से युक्त होता है (उषसः विभातिः) उसी प्रकार तुम दोनों भी इस गृहस्थाश्रम को (तराथः) पार कर वानप्रस्थाश्रम में (विभातीः) विशेष प्रकार से दीप्त होवो क्योंकि जिसका गृहस्थाश्रम ही ठीक नहीं बना उसका अगला वानप्रस्थाश्रम भी अच्छा नहीं रहता है ॥४३॥

मन्त्र

नवं वसानः सुरभिः सुवासा उदागां जीव उषसो विभातीः।
आण्डात् पतत्रीवामुक्षि विश्वस्मादेनसस्परि ॥४४॥

वर कहता है हे पुरोहित जी ! जिस प्रकार (उषसः विभातीः) उषा का प्रकाशक सूर्य प्रातः काल अनुपम सौन्दय से युक्त होकर (उदागां) उदित होता है उसी प्रकार मैं भी आपके सत्यपरामर्श से (नवं वसानः सुरभिः सुवासाः) नये सुगन्धित वस्त्रों को धारण करके नवोदित सूर्य की भांति अपने कार्य क्षेत्र में (उदागां) जागरुक रहूंगा। तुम्हारे इस अमृतमय उपदेश से हम (विश्वस्मादेनसस्परि) समस्त पापों से ऐसे छुट गये जैसे (आण्डात् पतत्री अमुक्षि) अण्डे से पक्षी मुक्त हो जाता है ॥४४॥

मन्त्र

शुम्भनी द्यावापृथिवी अन्तिसुम्ने महिव्रते ।
आपः सप्त सुस्रुवुर्देवीस्ता नो मुञ्चन्त्वंहसः ॥४५॥

ये (शुम्भनी द्यावा पृथिवी) सुन्दर मानसिक एवं पार्थिव शारीरिक शक्ति दोनों परस्पर मिलकर असन्त समीप एकीभूत होकर (अति सुम्ने महिव्रते) बड़े से बड़े कार्यों को पूरा करने में समर्थ होते हैं वे हम वर वधू के ठीक हैं (सप्त आपः सुस्रुवुः) सात प्रकार की धातुयें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीर में तथा सात प्रकार की ज्ञान धारायें मस्तिष्क में सदा ठीक प्रवाहित होती रहें (ता देवीः) ये दोनों प्रकार की शक्तियां स्वस्थ रहें जिससे हमें (अहंसमुञ्चन्तु नो) अकर्मण्यता रूपी पाप से छुड़ा देवें ॥४५॥

मन्त्र

सूर्यायै देवेभ्यो मित्राय वरुणाय च ।
ये भूतस्य प्रचेतसस्तेभ्य इदमकरं नमः ॥४६॥

जो सबको प्रेरणा देने वाली (षू प्रेरणे तुदादि) (सूर्यायै) दिव्य मानसिक शक्तियां हैं उनके भण्डार तो ब्राह्मण लोग हैं और शारीरिक शक्तियों के अधिष्ठाता क्षत्रिय लोग हैं (शतपथ) में ब्राह्मण को मित्र और क्षत्रिय को वरुण कहा है (ब्रह्मवै मित्र क्षत्रं वरुणः) इनके कारण ही संसार सदा अपने कार्य में जागरूक रहता है अतः (ये भूतस्य प्रचेतसः जो संसार को जगाने वाले (देवेभ्यः) देव हैं (तेभ्यः मित्राय वरुणाय च) उन ब्राह्मण एवं क्षत्रियों को (इदमकरं नमः) मेरा नमस्कार है गृहस्थ जीवन में भी हम इन शक्तियों के लिये उनके पास जाकर उनका सत्कार करते रहेंगे। ४६।

मन्त्र

य ऋते चिदभिश्रिषः पुरा जत्रुभ्य आतृदः ।
संधाता संधिं मघवा पुरूवसुर्निष्कर्ता विह्रुतं पुनः ॥४७॥

हे वर वधू ! अब तुम गृहस्थाश्रम में प्रविष्ट हुये हो यह तुम्हारा कार्य क्षेत्र अधिक कार्य करने का है अतः यहां सम्भव है कि किसी कार्य में व्यग्रता या भूल से शरीर के अङ्ग अपने जोड़ छोड़ दें या टूट जायें तो इसकी चिन्ता तुम्हें नहीं करनी चाहिये क्योंकि इस राष्ट्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में ऐसे ऐसे सुयोग्य राज वैद्य लोग हैं जो बिना ही (जत्रुभ्यः आतृदः) गर्दनादि मर्म स्थानों की हड्डियों में छिद्र किये तथा (ऋते चिदभिश्रिषः) बिना किसी चिपकाने वाले या लेप से ही (सन्धि संधाता) सन्धियों को जोड़ देने वाले हैं यही नहीं किन्तु विह्रुते निष्कर्त्ता) टेढ़े अंगों को भी ठीक कर देने वाले हैं। ऐसे राज वैद्य लोग (पुरुवसुः) राज्य में इस प्रकार रहते हैं जैसे शरीर में आत्मा वे भी तुम्हारे पूजनीय हैं। (मघवा) (मह्‌ पूजायाम्) उनका भी सत्कार करते रहना ये भी तुम्हारे सहायक हैं ॥४७॥

मन्त्र

अपास्मत् तम उच्छतु नीलं पिशङ्गमुत लोहितं यत्।
निर्दहनी या पृषातक्यऽस्मिन् तां स्थाणावध्या सजामि ॥४८।

वर वधू कहते हैं कि हे पुरोहित जी! यह तो ठीक है कि ऐसे भयंकर रोगों के लिये हम उन पूज्य राज्य वैद्यों का सत्कार करेंगे ही किन्तु ये जो छोटे मोटे रोग जैसे उठते बैठते या तेजी से चलने पर आंख के सामने (नील पिशङ्ग लोहितं तमः) नीला, पीला, लाल काले रंग का चित्र दिखायी देता है तथा कभी कभी शरीर इतना दुर्बल हो जाता है कि हमेशा (निर्दनी पृषातकी) ज्वर के समान गर्म स्पर्श वाला होता है ऐसे रोगों का निदान तो हम स्वयं (स्थाणौ) स्थाणु के समान दृढ़ शरीर बनाकर (अस्मिन् आसजामि) उसके अन्दर ही हम उन रोगों को पचा लेंगे अर्थात् शारीरिक बल के द्वारा उन्हें आत्मसात् कर लेंगे ॥४८॥

मन्त्र

यावतीः कृत्याः उपवासने यावन्तो राज्ञो वरुणस्य पाशाः।
व्यृद्धयो या असमृद्धयो या अस्मिन् ता स्थाणावधिसादयामि।४९।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे पुरोहित जी ! जब हम गृह छोड़कर कभी प्रवास मेंहों तो उस समय साधनादि की न्यूनता के कारण (यावतीः कृत्याः उपवासने) दैनिक कार्यों की हानि या (राज्ञो वरुणस्य पाशाः) राज्य प्रबन्धक के नियम का हमारे द्वारा उल्लंघन हो जाये या किसी कारणवश (व्यृद्धयः या असमृद्धयः) दारिद्र भावनायें या कृपणता की भावनायें आने की आशंका हो तो उन सबों को हम (अस्मिन स्थाणावधि साद यामि) वृक्ष के समान दृढ़ यम नियमादि के द्वारा दूर कर देंगे। शारीरिक उन्नति के साथ हम आध्यात्मिक उन्नति भी करते रहेंगे। यह हमें विश्वास है ॥४९॥

मन्त्र

या मे प्रियतमा तनूः सा मे बिभाय वाससः।
तयाग्रे त्वं वनस्पते नीविं कृणुष्व मा वयं रिषाम ॥५०

हे पुरोहित जी ! जो आपने हमें रोगादि से सावधान होनें के लिये कहा है वह तो ठीक ही है किन्तु हम अभी आपको विश्वास पूर्वक कह रहे हैं कि (या मे प्रियतमा तनूः) जो यह हमारा प्रियवर्धिष्णु शरीर है। जिसको ब्रह्मचर्य काल में हमने प्राणायाम व्यायाम के द्वारा हृष्ट पुष्ट किया है अब वह इतना दृढ़ हो चुका है कि उसे सर्दी गर्मी सता नहीं सकती इनसे बचने के लिये (सा मे बिभाय वाससः) वस्त्र धारण करने से वह भयभीत हो रहा है। हे (वनस्पते) वनस्पतियों के पालक अर्थात् कार्पास एवं रेशम की खेती के द्वारा राष्ट्र को वस्त्र देने वाले सज्जन हमारे लिये आप वस्त्रों में सदा लिपटे रहने के लिये वस्त्र न बनावें किन्तु (नीविं कृणुष्व) केवल ग्रन्थिमात्र लज्जा वसन की हमें आवश्यकता है। जिससे हम वस्त्र हीन होकर जंगली न बनकर लोक लज्जा के कारण (मा वयं रिषाम) कभी कष्ट न पायें यहां थोड़े वस्त्र धारण तथा अधोवसन ग्रन्थि लगा कर पहनना चाहिये यह उपदेश है ॥५०॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्र

ये अन्ता यावतीः सिचो य ओतवो ये च तन्तवः ।
वासो यत् पत्नीभिरुतं तन्नः स्योनमुप स्पृशात् ।।५१।।

लज्जावसन मात्र भी जिन वस्त्रों को हम धारण करें उन के अन्दर जो (ये अन्ता यावतीः सिचः) झालरें और जितनी भी किनारियां (य ओतवः ये च तन्तवः) और जो ताने बाने हैं वे सभी वस्त्र वासो (यत् पत्नीभिरुतम्) हमारी गृह देवियों के द्वारा निर्मित हों क्योंकि (तत् उपस्पृशात् नः स्योनम्) उन वस्त्रों का स्पर्श हमारे लिये सुखकारी होगा। आज इस भौतिक वाद युग में भी खद्दर का स्वास्थ्यादि की दृष्टि से कितना अधिक महत्व है यह विज्ञ लोगों से छिपा नहीं। यहां कुटीर उद्योग को कितना महत्व दिया गया है तभी तो लोग बेकारी की समस्या से विकल नहीं होंगे। काश यदि भारत आज इस (पत्नीभिरुतं तन्नः स्योनम्) इस वेद मन्त्र को अपनाता तो उसकी बेकारी की समस्या सहज में ही हल हो जाती ।।५१।।

मन्त्र

उशतीः कन्यला इमाः पितृलोकात् पतिं यतीः ।
अव दीक्षामसृक्षत स्वाहा ।।५२।।

अब पुरोहित वर से कहता है कि हे वर ! (उशतीः कन्यला इमाः) यह पुत्र की कामना करती हुई नव वधू अब तक जिस पिता के घर पर बड़े लाड़ चाव के साथ पाली पोसी गई उस (पितृ लोकात् पतिं यतीः) पिता के सुखमय घर को छोड़ कर तुझ पति के पास आ रही है। अपने ब्रह्मचर्य के सुख को छोड़कर पुत्र कामना से राष्ट्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हितार्थ तुम्हें वरण कर रही है यह तो इस कार्य के लिये (अबदी क्षामसृक्षत) दीक्षा ग्रहण कर रही। ओ हो कितना उत्कृष्ट इसका उद्देश्य (सु आह) बहुत ही अच्छा है ॥५२॥

मन्त्र

बृहस्पतिनावसृष्टां विश्वे देवा अधारयन् ।
वर्चो गोषु प्रविष्टं यत् तेनेमां सं सृजामसि ॥५३॥

हे वधू ! (बृहस्पतिना) (बृहताम पतिः बृहस्पतिः) बड़ों का भी बड़ा परमात्मा है जिसने दश पुत्र तक उत्पन्न करने का आदेश दिया उस प्रभु को इस प्रजा उत्पन्न करने वाली दीक्षा को सभी विद्वान धारण करते आये हैं (विश्वे देवा अधारयन) उस प्रभु ने स्वयं सर्व प्रथम सृष्टि रचकर (अवसृष्टां) सृष्टि उत्पन्न करने का उपदेश दिया है क्योंकि वही सबका गुरु है (पूर्वेषामपि गुरु का लेनानवच्छेदात्) दीक्षा को ग्रहण करने के पश्चात् (गोषु वर्चो) इन्द्रियों में तेज आ जाता है क्योंकि दीक्षा को पूर्ण करने के लिये प्रयत्न करना पड़ता है प्रयत्न से उत्साह और उत्साह से इन्द्रियां तेजस्विनी बन जाती हैं (तेन इमां संसृजामसि) उस दिव्य तेज से तुम भी युक्त होगी क्योंकि तुमने भी दीक्षा ग्रहण की है परमात्मा तुम्हें उस तेज से युक्त करें ॥५३॥

मन्त्र

बृहस्पतिना० । तेजो गोषु प्रविष्टं यत् तेने० ॥५४॥
बृहस्पतिना० । भगो गोषु प्रविष्टो यस्तेने० ॥५५॥
बृहस्पतिना० । यशो गोषु प्रविष्टं यत् तेने० ॥५६॥
बृहस्पतिना० । पयो गोषु प्रविष्टं यत् तेने० ॥५७॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्र

बृहस्पतिनावसृष्टां विश्वे देवा अधारयन् ।
रसो गोषु प्रविष्टो यस्तेनेमां सं सृजामसि ५८

हे देवि ! उस दीक्षा के प्रताप से ही इन्द्रियों में जो तेज ऐश्वर्य धारण करने की क्षमता यश क्योंकि सभी उसके प्रशंसक बन जाते हैं) स्तनों में दूध (पयः) (रसः) वात्सल्य रस स्वतः ही आ जाते हैं हम तुम्हें इससे युक्त करते हैं अर्थात् तू ने भी दीक्षा ग्रहण की है इस हेतु तुम्हारे अन्दर भी ये चीजें आ जावेंगी ॥५८॥

यहां प्रकरण में दीक्षा शब्द आया है अतः उसकी कुछ व्याख्या करना अप्रासंगिक नहीं होगा। दीक्षा मनुष्य जीवन निर्माण की सातवीं और अन्तिम सीढ़ी है, इससे पूर्व छः और सीढ़ियां हैं ! १ आभास, २ आवेश, ३ आवेगः ४ व्रत, ५ संकल्प, ६ यज्ञ, ७ वीं दीक्षा, आभास वह स्थिति है जब कोई व्यक्ति किसी अच्छी वस्तु के बारे में पुस्तक पढ़ता है या व्याख्यान सुनता है तो वह अनुभव करता है हां वास्तव में यह वस्तु अच्छी है अर्थात् अच्छी वस्तु का प्रभाव उसके ऊपर पड़ता है। २ आवेश। जिससे पहले प्रभावित था अब उसे करने की इच्छा करता है किन्तु अपनी दुर्बलताओं के कारण कर नहीं पाता। ३ आवेग जब उस कार्य को करने वाले साथी मिल जाते हैं तो उसे करने लगता है किन्तु साथ छूटते ही कार्य छोड़ बैठता है। ४ व्रत। उसके करने का नियम बना लेता है किन्तु फिर भी कभी २ कार्य छूट ही जाता है। ५ संकल्प। अब चाहे कोई साथी हो या न हो उसको करने का दृढ़ निश्चय कर लेता है ६ यज्ञ। जिस कार्य को उसने कराने का दृढ़ निश्चय किया उसे अब उस ढंग के साथियों से मिल कर करता है। ७ दीक्षा। जिस कार्य को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने साथियों के साथ मिल कर अब तक करता रहा उसी कार्य को यावज्जीवन करने की समाज के अन्दर घोषणा करना, यही दीक्षा है। घोषणा करने से लाभ यह होता है कि यदि किसी कारण मन के अन्दर कोई दुर्बलता आई तो लोक लज्जा के भय से उन पर दीक्षित विजय प्राप्त करता है। आजकल इस दीक्षा के बिना ही तो शिक्षा बेकार पड़ी है।

मन्त्र

यदीमे केशिनो जना गृहे ते समनर्तिषू रोदेन कृण्वन्तोऽघम्
अग्निष्ट्वा तस्मादेनसः सविता च प्र मुञ्चताम् ५९

फिर पुरोहित कहते हैं हे वर! जब यह नव वधू तुम्हारे घर जायेगी तो वहां पर इस के नवागमन की प्रसन्नता के बहाने (इमे केशिनो जना) ये लम्बे २ केश वाले भड़वे नाचने कूदने वाले तुम्हारे घर आकर भी (समनर्तिषू) नाचे कूदेंगे और वधू के पास जाकर रोने आदि का बखेड़ा खड़ा कर वधू को दुःखी करेंगे उन सब पाप करने वालों को विद्वान ब्राह्मण पुरोहित तथा (सविता) राज्याधिकारी लोग उन पाप कर्मों से जो पाप की सम्भावना है (तस्मादेनसः) उस पाप से तुम्हारी रक्षा करेंगे। (प्रमुञ्चताम्,) वे अपने कर्तव्य का पालन करते हुये तुम्हारी रक्षा करें ॥५९॥

मन्त्र

यदीयं दुहिता तव विकेश्यरुदद् गृहे रोदेन कृण्वत्य१घम्।
अग्निष्ट्वा ॥६०॥

पुरोहित वधू के पिता से कहता है कि महाशय जी और की बात तो दूर है (यदीयं तव दुहिता) जो यह तुम्हारी लड़की तुम्हारे घर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को छोड़ कर पति के घर जा रही है तो यह स्वाभाविक है कि यह तुम्हारे मोह के कारण अपने केश वस्त्रादि का भी ध्यान न रख कर अस्त व्यस्त हो कर रोदन करेगी तो इस को भी विद्वान पुरोहित तथा राज पुरोहित समझा कर मोहरूपी पाप से छुड़ा देंगे ॥६०॥

मन्त्र

यज्जामयो यद् युवतयो गृहे ते समनर्तिषू रोदेन कृण्वतीरघम् । अग्निष्ट्वा० ॥६१॥

पुरोहित ! हे वर वधू ! के आने के पश्चात् जो कन्याएं तथा नव युवतियां उसको देखने के बहाने से जाकर उसे बहकाने लगें उसके सामने नाचने कूदने रोने का ढोंग करने लगें जिससे अपरिचित वधू दुःखी हो जावे, उन सब को भी विद्वान ब्राह्मण तथा राज पुरोहित रोकें उन्हें स्वच्छन्द प्रवेश से मना कर इस पाप से तुम्हारी रक्षा करें ॥६१॥

मन्त्र

यत् ते प्रजायां पशुषु यद्वा गृहेषु निष्ठितमघकृद्भिरघं कृतम् । अग्निष्ट्वा तस्मादेनसः सविता च प्र मुञ्चताम् ॥६२॥

हे वर ! (ते प्रजायाम) तुम्हारी सन्तान पशुओं गृह दि में रोगादि या दुष्ट लोगों के द्वारा जो अनिष्ट होगा उस सबको उपदेश तथा राज्य प्रबन्ध द्वारा दूर कर दिया जायेगा । क्योंकि अग्निरूप ब्राह्मणों का कार्य यही है कि उपदेश द्वारा प्रजा के अज्ञान रूप दुःख को दूर करें तथा सविता, राज्य शासक दण्ड द्वारा दुष्टों को शासित कर प्रजा को सुखी करें ॥६२॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्र

इयं नार्युप ब्रूते पूल्यान्यावपन्तिका ।
दीर्घायुरस्तु मे पतिर्जीवाति शरदः शतम् ॥६३॥

हे नवीन गृह स्वामिन् वर! अब यह बधू तो तुम्हारे जीवन की सङ्गिनी हो चुकी है, इसके प्रत्येक श्वास प्रश्वास में तुम ओतः प्रोतः हो रम चुके हो देख रहे हो कि (इयं पूला नि आवयन्तिका) यह जो लाजाहुति " भूने हुए धानों की आहुति अग्नि में डालती हुई कुछ कह रही है क्या तुम जानते हो कि यह क्या कह रही है ? अरे इपमु य व्रू ते) यह तो प्रभु से प्रार्थना करती हुई कह रही है कि हे दया-मय प्रभो ! जिस प्रकार यह लाजाहुति अग्नि में जलकर अग्नि को विशेष प्रज्वलित कर रही है उसी प्रकार मैं भी अपने पति देव की व्रताग्नि में अपने आपको जला कर पति को यश से प्रदीप्त करूंगी (दीर्घायु रस्तु मे पतिर्जीवाति शरदः शतम) मेरा पति दीर्घायु होकर सौ वर्ष तक जीवे ॥६३॥

मन्त्र

इहेमाविन्द्र सं नुद चक्रवाकेव दंपती ।
प्रजयैनौ स्वस्तकौ विश्वमायुर्व्यश्नुताम् ॥६४॥

अब पुरोहित वर वधू को आशीर्वाद देते हुये कहता है कि हे (इन्द्र) (परमेश्वर्य शालिन् प्रभो) यह तो ठीक है कि जब इस दम्पति में कभी मतभेद होगा तो मैं उसे किसी प्रकार दूर कराने का प्रयत्न करूंगा किन्तु प्रभो यह तुम्हारी कृपा के बिना पूर्ण सिद्ध नहीं हो सकता। अतः तुम इन के अन्तर्हृदय में (संनुद) प्रेरणा करते रहो कि (दम्पती) ये दम्पती (चक्रवाकेव) चकवा चकवी के समान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परस्पर मिलकर प्रेम करते हुये (एनौ प्रजया स्वस्तकौ) ये दोनो प्रजा और उत्तम गृह सहित (विश्वमायुर्व्यश्नुताम्) सम्पूर्ण सौ वर्ष या इससे भी अधिक आयु को प्राप्त होवे और नाना प्रकार भोग्य पदार्थों का सेवन करें ॥६४॥

मन्त्र

यदासन्द्यामुपधाने यद वोपवासने कृतम् ।
विवाहे कृत्यां यां चक्रुरास्नाने तां नि दध्मसि ॥६५॥

वधू का पिता कहता है कि अब विवाह सम्पन्न हो गया हमारी पुत्री के विवाह में जो लोग आये थे उनके लिये जो (आसन्द्यां उपधाने यद् वोपवासने कृतम्) आसन, खाट, पर्यङ्क सिरहाना और जो अन्य वस्त्र लाये गये थे उन पर विवाह की भीड़ के कारण अधिक कार्य किया गया उनका विषम प्रयोग हो गया जिससे वे गन्दे या कोई कोई तो टूट भी गए हैं उन सबको (आस्नाने) शुद्ध या ठीक करने वालों के द्वारा मैं (दध्यमसि) उनके मलिनतादि दोषों को दूर करता हूं । क्योंकि इनमें कुछ अन्य लोगों को भी तो वस्तुयें हैं जो आतिथ्य के लिये मांग कर लायी गई थीं उनको ठीक करा कर ही वापिस करेंगे ॥६५॥

मन्त्र

यद दुष्कृतं यच्छमलं विवाहे वहतौ च यत् ।
तत् संभलस्य कम्बले मृज्महे दुरितं वयम् ॥६६॥

अब लड़की का पिता लड़के के पिता से कहता है । हे समधि भाई ! (विवाहे) इस विवाह के अवसर पर मैंने तो पूरी कोशिश की हमारे यहां जितने भी बराती आये हैं उनको किसी प्रकार का कष्ट नहीं होना चाहिये, किन्तु फिर भी कार्य बाहुल्य से आपकी सेवा में कोई न्यूनता रह गई हो या (वहतो) दहेज में कमी रह गई हो या अज्ञान वश (पतशामलम्) जो मलिन घृणित कार्य हो गया हो (तत्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुरितम्) उस बुरे कार्य को (सम्भलस्य कम्वले) कमनीय मधुर वाणी अर्थात् आपके सामने विनम्रता के द्वारा हो तो दूर किया जा सकता है। शुद्ध किया जा सकता है। हम अपनी त्रुटियों के लिये आप से क्षमा प्रार्थना करके (मृज्महे) अपने आप को शुद्ध करते हैं ॥६६॥

मन्त्र

संभले मलं सादयित्वा कम्बले दुरितं वयम् ।
अभूम यज्ञियाः शुद्धाः प्र ण आयूंषि तारिषत् ॥६७॥

अब वर का पिता वधू के पिता से कहता है, नहीं भाई नहीं, हमें आपकी सेवा में कोई न्यूनता नहीं दिखाई दी। यदि हमारे ही व्यवहार से तुम्हें कोई कष्ट हो गया हो तो उस (दुरितं मलं) त्रुटि रूपी मल को (वयम) हम (सम्भले कम्वले) प्रेम युक्त कमनीय वार्ता-लाप के द्वारा उसको दूर करते हैं आपस के परस्पर मेल के व्यवहार पर ही उसे रखकर उस बात को नितान्त भूलकर (अभूम यज्ञियाः शुद्धाः) पवित्र अन्तःकरण वाले होकर हम संगठन के कार्य करने वाले होवें। वह प्रेम युक्त वाणी ही हमारी जीवन नौका को पार लगाने वाली होगी क्योंकि उसके अभाव में तो हम परस्पर लड़ते हुए दुःख सागर में ही डूबते रहेंगे। इन मन्त्रों में आये हुये सम्भल और कम्वल शब्द कुछ विशेष व्याख्या की अपेक्षा रखते हैं क्योंकि प्रायः सभी भाष्यकारों ने इन दोनों शब्दों को अछूता ही छोड़ दिया। हां जयदेव जी विद्यालंकार ने सम्भल शब्द का अर्थ मधुर भाषो, वर का प्रशंसक पुरुष) यह अर्थ किया है। किन्तु कम्वल को वे भी छोड़ गये। कम्वल में विवाह के सारे मैल पोंछे जाते हैं ऐसा अर्थ भाष्य कारों ने किया। आश्चर्य तो यह है कि पं० सातवलेकर जी भी जिन्हें ब्रह्मर्षि की पदवी मिली वे भी इसी अर्थ से चिपके रहे। यह कम्वल क्या है कोई साबुन तो नहीं जिसमें सारे मल पोंछे जाते हों उसमें धोये जाते हों किन्तु यह तो विचित्र साबुन है जो दुष्कृत और दुरित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मल को धोने वाला है, ऐसे साबुन का तो हमें पता नहीं जिससे ऐसे मल धुलते हों। हां बुद्धि नेत्र को बन्द कर इसे छू मन्त्र मान लें तो फिर आपत्ति ही क्या, फिर तो रास्ता साफ है कुछ भी अर्थ करते रहिये। किन्तु ऋषि दयानन्द ने तो हमारे नेत्र खोल दिये हैं। अच्छा तो आप पूछेंगे कि आपने जो अर्थ किया वह कैसे ठीक है? तो निवेदन यह है कि हमारा अर्थ धातु के अनुसार है। सम्भल शब्द में सम् उपसर्ग और भल परिभाषणे धातु है सम्यग् (सुष्ठु भलतीति सम्भलः।) कम्वल का अर्थ कमनीय स्वयं निरुक्तकार यास्क ने किया है। "कम्वोजाः कम्वल भोजाः कम्वल कमनीयो भवति।" इसलिये सुन्दर कमनीय मधुर भाषण के द्वारा यह अर्थ हमने किया है सो उचित ही है ॥६७॥

मन्त्र

कृत्रिमः कण्टकः शतदन् य एषः।
अपास्याः केश्यं मलमप शीर्षण्यं लिखात् ॥६८॥

वर का पिता वधू के पिता से कहता है कि हे बन्धुवर! तुम तुम अपनी इस लाडली बेटी की किसी प्रकार की भी चिन्ता मत करना। जैसे तुम्हारी यह लाडली पुत्री है हमारी भी वैसे ही है (यः एषः) जो यह (शतदन् कृत्रिमः कण्टकः) सैंकड़ों दांतो वाला कंघा बनाया हुआ है। इस कंघे के समान ही तर्क शास्त्र विशारद अनेक विद्या विद् हमारे पुरोहित जी हैं ये इस पुत्री की मानसिक दुर्बलता या बाह्य केशादि की कमजोरी को अपनो विद्या (अस्याः) इसके (मलम्) मल को (अप अप) दूर कर देंगे। पुरोहित कंघे के सदृश यजमान के मल को दूर करने वाले होने चाहियें ॥६८॥

मन्त्र

अङ्गादङ्गाद् वयमस्या अप यक्ष्मं नि दध्मसि ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तन्मा प्रापत पृथिवीं मोत देवान् दिवं मा प्रापदुर्वन्तरिक्षम् ।
अपो मा प्रापन्मलमेतदग्ने यमं मा प्रापत पितॄंश्च सर्वान्॥६९॥

भगवन् मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि (वयम्) हम सब (अस्याः) इस वधू के (अङ्गादङ्गाद् यद्मं निदध्मसि) अङ्ग अंग से रोगों को दूर कर देंगे। यह आपके गृह के समान ही निरुग्ण रहेगी। यह तो इतनी निरुग्ण हो जायेगी कि (पृथिवीं) गृहस्थाश्रम में ही क्यों अन्तरिक्ष (वानप्रस्थाश्रम तथा दिवं सन्यासाश्रम) में भी इसे रोग नहीं प्राप्त कर सकेंगे। इसके जो (अपः) जल के समान सर्वत्र व्यापक अर्थात् इसके चारों ओर घूमने वाले लड़के होंगे वे भी (मा प्रापत् निरुग्ण) रोग रहित रहेंगे उनको भी रोग नहीं सतायेगा क्योंकि जो यह स्वयं रोग रहित है और (सर्वान् पितृश्च) इसके सभी बूढ़े लोग भी इसकी पवित्रता स्वच्छता के कारण रोग रहित रहेंगे। यह उनकी भी आलस्य रहित सेवा करेगी ॥६९॥

मन्त्र

सं त्वा नह्यामि पयसा पृथिव्याः सं त्वा नह्यामि पयसौषधीनाम् ।
सं त्वा नह्यामि प्रजया धनेन सा संनद्धा सनुहि वाजमेमम् ७०(१२

अब अन्त में वर पत्नी को विश्वास दिलाते हुए फिर वधू से कहता है कि हे प्राण प्रिये ! तूने अब मेरा पल्ला पकड़ लिया है। तुझे मेरे पास किसी प्रकार का कष्ट नहीं होगा मैं तुम्हें (पयसा पृथिव्या नह्यामि) पृथिवी के पुष्टीकारक पदार्थों से बांधता अर्थात् युक्त करता हूँ (पयसौषधीनाम्) उत्तम पुष्टिकारक औषधियों के रस के लिये भी तू नहीं तरसेगी मैं तुझे (प्रजया धनेन) सर्व श्रेष्ठ धन प्रजा से खाली नहीं रहने दूंगा किन्तु यह सब सामान तो यथा समय होगा इसलिये तू घबरा मत (सनुहि वाजम्) धैर्य रूपी (वाजम्) वीर्य पराक्रम को धारण कर बिना धैर्य से बनता हुआ कार्य भी बिगड़ जाता है इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिये तो मनु ने धर्म के दस लक्षणों में धैर्य को पहला स्थान दिया। धृति क्षमा दमोस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रह धीः विद्या सप्तमक्रोधः दशमकं धर्म लक्षणम् ।।७०।।

मन्त्र

अमोऽहमस्मि सा त्वं सामाहमस्म्यृक्त्वं द्यौरहं पृथिवी त्वम् ।
ताविह सं भवाव प्रजामा जनयावहै ।।७१।।

हे वल्लभे ! इस गृहाश्रम रूपी शरीर का (अमोऽहमस्मि) मैं प्राण हूं जिस प्रकार प्राण के बिना यह पंचभौतिक शरीर व्यर्थ है उसी प्रकार मेरे बिना यह गृहस्थाश्रम व्यर्थ है और तुम इसकी वाणी हो, इसको व्यक्त करने वाली हो तुम्हारे बिना यह गृहाश्रम व्यक्त नहीं होता। जब तुम घर में होती हो तभी तो यह व्यक्त होता है कि यह किसी गृहस्थ का गृह है, इसलिये (सा त्वं) तुम वह हो अर्थात् वाणी हो। इसमें मैं साम हूं किसी पदार्थ या कार्य के गुण का बखान करने वाला हूँ तो तुम (ऋक्) हो उस पदार्थ के एक एक गुण का विश्लेषण करने वाली हो। यहां मैं द्यौ हूं वर्षण तथा प्रकाश करने वाला हूं तो तुम पृथिवी हो उस हमारे प्रकाश तथा वर्षण को विस्तार करने वाली हो तुम्हारे बिना हमारी प्रकाश तथा वर्षण शक्ति बेकार है देवि ! हम दोनों मिलकर ही गृहस्थाश्रम को प्रजा से भरें प्रजा वाले बनें ।।७१।।

मन्त्र

जनियन्ति नावग्रवः पुत्रियन्ति सुदानवः ।
अरिष्टासू सचेवहि बृहते वाजसातये ।।७२।।

हे प्रिये जिस प्रकार से हम दोनों ने पुत्र की इच्छा से इस आश्रम को स्वीकार किया है इसी प्रकार (अवग्रवः) अविवाहित ब्रह्मचारी (अन्यस्नातक सुदानवः) वीर्यदान में पूर्ण समर्थ भी (पुत्रियन्ति) पुत्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की इच्छा से ही (जनियन्ति) विवाह की इच्छा करते हैं। क्योंकि आचार्य ने स्नातक बनते समय कहा था (प्रजा तन्तुं मा छेत्सी) आओ हम (अरिष्टावसू) प्राणों की संयमादि से रक्षा करते हुए (वृहते वाजसातये) बहुत बड़े बल वीर्य की प्राप्ति के लिये (सचेवहि) मिलकर रहें। क्योंकि एकता ही में तो बल है। हम दोनो चाहे कितने ही बुद्धिमान् बलवान्, धनवान हों किन्तु यदि हममें प्रेम युक्त मेल नहीं रहेगा तो पृथक पृथक सन्तान उत्पन्न नहीं कर सकते ॥७२॥

मन्त्र

ये पितरो वधूदर्शा इमं वहतुमागमन् ।
ते अस्यै वध्वै संपत्न्यै प्रजावच्छर्म यच्छन्तु ॥७३॥

अब अन्त में विवाह में जो बाराती लोग आये हैं उनको विदाई देते हुए कहता है कि जो (ये पितरः) जो ज्ञान वृद्ध या वयो वृद्ध माता पिता गुरु आचार्य (वधू दर्शा) वर वधू को देखने के लिये वहतुं) विवाह में (आगमन्) पधारे हैं, वे (संपत्न्यै अस्यै वध्वै) पति के सहित यज्ञ करने वाली इस नव वधू को (प्रजावत्) प्रजा के सहित (शर्म) सुख प्राप्ति के लिये आशीर्वाद प्रदान करें ॥७३॥

मन्त्र

येदं पूर्वागन् रशनायमाना प्रजामस्यै द्रविणं चेह दत्त्वा ।
तां वहन्त्वगतस्यानु पन्थां विराडियं सुप्रजा अत्यजैषीत् ॥७४॥

और जो यहां ग्राम की स्त्रियां पंक्तियों में बंधी हुई सी पधारी हुई हैं वे भी इस वर वधू को प्रजा और धन से पूर्ण होने का आशीर्वाद इस वधू को अपने अनुभव ज्ञान के द्वारा (अगतस्य पन्थामनु) भावी जीवन के मार्ग पर सुरक्षित ले चलें। जिससे यह वधू तुम्हारे अनुभवों का लाभ उठाती हुई (विराट्) विशेष तेज वाली होकर (अत्यजैषीत्) जीवन संग्राम को जीते उसमें विजय श्री लाभ करे ॥७४॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्र

प्र बुध्यस्व सुबुधा बुध्यमाना दीर्घायुत्वाय शतशारदाय ।
गृहान गच्छ गृहपत्नी यथासो दीर्घं त आयुःसविता कृणोतु
७५(१४

अब विवाह जन्यवास क्रिया की समाप्ति के पश्चात् कन्या का पिता उसकी विदाई देते हुए कहता है कि हे मेरी लाडली पुत्रि ! अब तक तो तू हमारे घर स्वतन्त्र गृह कार्य भार से रहित गृहस्थ जीवन के उत्तरदायित्व से मुक्त खेलती और अध्ययन करती रही किन्तु अब तो तू किसी घर की साम्राज्ञी होकर जा रही है उस घर का राज काज तुम्हारे हाथों में होगा उसके बनने बिगड़ने का उत्तरदायित्व तुम्हारे ऊपर रहेगा । गृहस्थ के भार को सम्भालना कोई हंसी खेल नहीं.यह वह आश्रम है जिसके सहारे से अन्य सब तीन आश्रम ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ सन्यास खड़े हैं गृहस्थ को अपने धर्म का पालन करते हुए इन तीनों की सेवा करनी चाहिये यह बहुत बड़ा कार्य है । इसकी बागडोर अज्ञानियों के हाथ में नहीं दी जा सकती । हे बेटी ! यह तो मुझे मालूम है कि तू (सुबुधा) उत्तम ज्ञान से युक्त है तभी तो तुम्हें इसमें प्रवेश का अधिकार मिला है, किन्तु फिर भी पुत्री ! कभी आलस्य या प्रमाद वश इसमें असावधान हुई किसी सुयोग्य अतिथि का सत्कार न हुआ या पितरों की सेवा न हुई तो तुम अपने धर्म से च्युत हो जाओगी । अतः मेरी बच्ची ! तू अपने धर्म के पूर्वापर कर्तव्याकर्तव्य (बुध्यामाना) को जानती हुई (प्रबुध्यस्व) सदा सैनिक की भांति जागरुक रह । क्यों कि कहा है यो "जागारः तमृच्चः कामयन्ते" दूसरी बात यह भी है कि बेटी जो लोग सौ या इससे अधिक वर्ष की आयु प्राप्त करते हैं वे अपने जीवन पथ में सदा उद्‌बुद्ध रहते हैं, इसलिये तुम्हें भी उतनी आयु प्राप्त करने के लिये जागरुक रहना होगा । तू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो अब अपने पति के घर की (गृहपत्नि) घर को मालकिन है तू निर्भय होकर इसके घर (गृहान् गच्छ) में प्रवेश कर (सविता) सकल जगत का प्रेरक प्रभु इस घर में (त आयुः दीर्घं कृणोतु) तेरी आयु लम्बी करें ।।७५।।

इस प्रकार सूर्या के विवाह का वर्णन करते हुए प्रभु ने यह उपदेश दिया कि जिस प्रकार पति के घर जाने वाली लड़की को अनेक प्रकार से शिक्षित दीक्षित किया जाता है उसी प्रकार जो मनुष्य की शक्ति ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए मस्तिष्क की ओर प्रवाहित हो रही थी अब वह प्रजनन शक्ति की ओर प्रवाहित होने जा रही है प्रजनन शक्ति की ओर प्रवाहित होने से पूर्व उसको अपनी उतनी ही तैयारी करनी होगी जितनी नव वधू को नव गृह प्रवेश से पूर्व इस प्रकार का वर्णन कर वेद ने यह भी निर्देश किया कि कन्यायें गृह प्रवेश से पूर्व कितनी सुसज्जित तथा अपने कार्य में चैतन्य रहें। इस प्रकार के पति पत्नी जिस आश्रम को आबाद करते हों उसी को मनु ने सागर की उपमा दी और कहा कि (यथा नदीनदाः सर्वे सागरे यान्ति संस्थितिं) अर्थात् अन्य तीन आश्रमों को नदी कहा है। यह गृहस्थाश्रम ही सब आश्रमों की आधार शिला है क्योंकि इसी से योगी, ब्रह्मचारी सन्यासी निकलते हैं यही आश्रम इन सभी हीरों की खान और इन्हीं हीरों से सुन्दर परिवार, प्रान्त, देश समाज का निर्माण होता है। अतः वेद की शिक्षा अनुसार स्वीकार किया हुआ दाम्पत्य जीवन सरस तथा आनन्द दायक होता है।

।। ओ३म् शमिति ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पं० आचार्य प्रियव्रत वेद
वाचस्पति
श्री:
स्मृति संग्रह

पुस्तकालय
सं० 8 ४३६२
पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

रामदल दरीबा कलां, देहली

शुद्ध वैशाख १७—५—च० २०१

आलोचना

किसकी सेना में भरती होंगे ? कृष्ण की या कंस की ?

8971

श्री बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार द्वारा प्रणीत उक्त निबन्ध देखा। यह श्री रत्नलाल वंशल के "गो-पूजा" लेख के उत्तर में लिखा गया है। निबन्ध विद्वतापूर्ण लिखा गया है। उनका अनुसन्धान बहुत दूर तक पहुंचा हुआ है। कई बातों में मतभेद होने पर भी विद्वान् लेखक का पशु की वसा आदि के हवन का तात्पर्य बताना, हमें बहुत पसन्द आया। उसमें असंगति भी पड़ती दिखाई नहीं देती। लेकिन इतनी गहराई के तात्पर्य में ले जाने से भय है, कि कहीं साधारण जनता इस तात्पर्य को कृत्रिम न समझ ले। "धेन्वै चानडुहश्च नाश्नीयात्, तदुहोवाच याज्ञवल्क्योऽश्नाम्येवाहमंसलं चेद् भवति" "मांसोदनम् पाचयित्वा" इत्यादि शतपथ के प्रमाणों का वास्तविक तात्पर्य अच्छे प्रकार से बता दिया गया है। "अन्यः सह विवादेतु वयं पंचोत्तरं शतम्" इस न्याय से जब कि यह निबन्ध सनातन धर्म तथा आर्य समाज से भिन्न बंसल के लेख पर लिखा गया है, तब सनातन धर्म पर कई छींटे डाल देना उचित प्रतीत नहीं होता। मेरा भी "बंसल का गो-माता से विद्रोह" लेख दैनिक सन्मार्ग काशी से निकल चुका है। हमने उसमें सभी वचनों की व्यवस्था बताई है।

लेखक—दीनानाथ शास्त्री, विद्यावागीश, रामदल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

GURUKUL K... LIBRARY	
	Date
Acces on	
Class on	Sharma 14.5.04
Cat on	Sharma 15.5.04
Tag etc.	Sharma 14.02.04
Filing	Sharma 15.5.04
E.A.R.	
Any other	
Checked	

R215.1,SAM-A

8971

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वामी समर्पणानन्द जी द्वारा लिखित अपूर्व साहित्य

१. शतपथ ब्राह्मण का भाष्य (पौने तीन कांड छपेगा) जिसकी आर्य जगत चिरकाल से प्रतीक्षा कर रहा है।

२. पञ्च यज्ञ प्रकाश (प्रकाशित)

३. अथर्ववेद भाष्य (केवल चौदहवाँ कांड)

४. काया कल्प (प्रकाशित)

५. किसकी सेना में भरती होंगे ?

६. ऋग्वेद का मणि सूत्र (छपेगा)

७. गीता भाष्य (छप रहा है)

८. अथर्व वेद भाष्य (प्रथम द्वितीय कांड)

९. वेदों के सम्बन्ध में क्या जानो और क्या भूलो

१०. सोम

११. शतपथ में एक पथ

१२ मरुत सूक्त

१३. उसकी राह पर

१४. भक्ति लहरी

१५. धक्का किस ओर

१६. सुर और असुर

१७. सोम और सुरा

१८. प्रातः सूक्त

१९. तिरंगा झण्डा

२०. मध्यम मार्ग

नोट :— धरती तल पर वेद विषय में पं० बुद्ध देव जी जैसी सूक्ष्म किसी की नहीं।

(पं० भगवत दत्त जी रिसर्च स्कालर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar